ईकाई – 2

प्रस्तावना (Introduction)

गत ईकाई में राजाज्ञा पालन के समझौतावादी आधार को खोजने का प्रयास किया गया था। इस ईकाई में राज्य से सम्बन्धित उपयोगितावादी सिद्धान्तों को समझने का प्रयास किया जायेगा। उपयोगितावाद से अभिप्रायः है कि राज्य के कानूनों तथा व्यक्ति के कार्यों के पीछे औचित्य का आधार केवल उसकी उपयोगिता है। अगर राज्य का कानून या व्यक्ति का धर्म, व्यक्ति के सुख में वृद्धि करता है तथा उसके दुःखों को कम करता है, तभी उस कानून तथा कार्य को उचित ठहराया जा सकता है। बैंथम को उपयोगितावाद का मुख्य सिद्धान्तकार माना जाता है। जिन्होंने इसे एक विचार से व्यवहारिक रूप देने का प्रयत्न किया। उन्हीं के शिष्य जे.एस.मिल हैं जिन्होंने बैंथम के उपयोगितावाद को नैतिक आधार प्रदान करने का प्रयास किया। इस ईकाई में दोनों विचारकों का राजनीतिक चिंतन में योगदान का अध्ययन किया जायेगा।

उद्देश्य (Objective)

1. उपयोगितावाद व सुखवाद को समझना।
2. भौतिक उपयोगितावाद व नैतिक उपयोगितावाद के अंतर को जानना।
3. बैंथम के द्वारा समाज–सुधारक के रूप में दिए गए योगदान को जानना।
4. जे.एस.मिल द्वारा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर दिए गए विचारों का मूल्यांकन करना।

अध्याय – 3

जेरेमी बेन्थम (Jeremy Bentham)

3.1 प्रस्तावना (Introduction).

जेरमी बैंथम का नाम केवल राजनीतिक विचारकों में ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में, कानून के क्षेत्र में, अन्तर्राष्ट्रीय कानून में तथा एक महान समाज सुधारक के रूप में भी गरिमापूर्ण है। बैंथम जो मूलतः एक कानूनविद् थे, ने राजनीतिक विज्ञान को ज्ञान कोष भरने के लिए अनेक विषयों पर अपने विचार दिए, परन्तु उनकी सबसे महत्वपूर्ण देन उपयोगितावाद का सिद्धान्त है। उपयोगितावाद मुख्यतः एक नैतिक सिद्धान्त है जिसका आधार वह मनोवैज्ञानिक मत है जिसे सुखवाद (Hedonism) कहा जाता है। सुखवादी सिद्धान्त के अनुसार हर व्यक्ति सुख की खोज करता है तथा दुःख से बचना चाहता है। इसके अनुसार सभी मनुष्यों के काम यद्यपि और भी प्रेरकों से प्रभावित रहते हैं पर अन्तिम प्रेरक सुख बनाम दुःख ही होता है। इस अवधारणा का प्रारंभ यूनान में विशेषतया सेरेनायक विचारधारा (Cyrenaic School) के संस्थापक (Aristippus)की शिक्षाओं से और कुछ–कुछ एपिक्युरस (Epicurus) की शिक्षाओं से हुआ था। परन्तु फिर भी आज जब की उपयोगितावाद का नाम आता है तो स्वतः ही उसके साथ बैंथम का भी नाम जुड़ता है। इसका कारण यह है कि बैंथम ने उपयोगितावाद को सिद्धान्तों से बाहर निकलकर व्यवहारिक रूप प्रदान करने का प्रयास किया। बैंथम ने राज्य के कार्यों के साथ इस सिद्धान्त को जोड़ा तथा राज्य का यह कर्त्तव्य निर्धारित किया कि राज्य व्यक्ति के जीवन में सुख में वृद्धि करेगा तथा दुःखों में कमी करेगा।

3.2 उद्देश्य (Objectives)–

इस अध्याय को पढ़ने के उद्देश्य हैं–

- बैंथम के प्रारम्भिक जीवन तथा तत्कालीन परिस्थितियों को जानना।
- बैंथम के द्वारा दिए गए उपयोगितावाद के दर्शन को समझना।

- बैंथम के द्वारा एक सुधारक के रूप में दिए गए कार्यों को जानना।

3.3 जीवन परिचय (Life Sketch)

असाधारण प्रतिभा के धनी उपयोगितावादी विचारक जेरेमी बेन्थम का जन्म 15 फरवरी 1748 ई० को लन्दन के एक प्रतिष्ठित वकील परिवार में हुआ। उसने अपनी विलक्षण बुद्धि के बल पर मात्र 4 वर्ष की आयु में ही लेटिन भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया। उसने 13 वर्ष की आयु में मैट्रिक तथा 15 वर्ष की आयु में 1763 में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। उसके बाद उसने 'लिंकन्स इन' में कानून का अध्ययन किया और वहाँ से कानून का अध्ययन करने के पश्चात् उसने वकालत करना शुरू कर दिया। वकालत के पेशे से उसको अनुभव हुआ कि इंग्लैण्ड के कानून में भारी त्रुटियाँ है। यदि ये त्रुटियाँ इंग्लैण्ड के कानून में रहेंगी तो न्याय – व्यवस्था निरर्थक रहेगी। उसने महसूस किया कि कानून भंग करने वाले दण्ड से आसानी से बच जाते थे और निरपराध दण्ड पाते थे। उसने इंग्लैण्ड के कानून के समस्त दोषों को दूर करने के प्रयास शुरू कर दिए। उसने 1776 में अपनी पुस्तक 'Fragments on Government' प्रकाशित करके इंग्लैण्ड की राजनीति में तहलका मचा दिया। इस पुस्तक में बलेकस्टोन द्वारा प्रतिपादन इंगलिश कानून की टीकाओं में प्रतिपादित सिद्धान्तों की आलोचना की गई। इसके बाद कानून विशेषज्ञों ने बेन्थम के सुझावों के अनुसार ही इंगलैण्ड की कानून व न्याय व्यवस्था में परिवर्तन व सुधार करने शुरू कर दिए। इसके पश्चात् भी बेन्थम प्रतिदिन कुछ न कुछ लिखता रहा। उसकी ख्याती को देखकर उसके पिता ने उसके लिए एक सौ पौण्ड की वार्षिक आय की व्यवस्था कर दी ताकि वह आर्थिक चिन्ता से मुक्त होकर अपना लेखन कार्य करता रहे। उसने नीतिशास्त्र, कानून, तर्कशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, दण्डशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों का गहरा ज्ञान था। उसने इन क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा के जौहर दिखाए और एक विशाल राजनीतिक चिन्तन को जन्म दिया। 1789 में उसकी रचना 'नैतिकता और विधान निर्माण के सिद्धान्त' का प्रकाशन हुआ। इससे उसकी प्रसिद्धि चारों ओर फैल गई। 1792 में फ्रांस की राष्ट्रीय सभा ने उसे 'फ्रेंच नागरिक' की सम्मानजनक पदवी

प्रदान की। इसी वर्ष उसके पिता की मृत्यु हो गई। विरासत में मिले धन से उसकी आर्थिक स्थिति अधिक सुदृढ़ हो गई और उसने अपने जीवन का शेष समय लन्दन स्थित अपने भवन 'Hermitae' में बिताया। यहीं पर उसने एक उग्र–सुधारवादी के रूप में अपना कार्य किया। उसने अपनी उपयोगिता दर्शन को इसी भवन में परिपक्व किया। 6 जून 1832 को 84 वर्ष की आयु में उसका इसी स्थान पर निधन हो गया।

महत्त्वपूर्ण रचनाएँ (Important Works)

बेन्थम निर्बाध रूप से लिखने वाला एक महान् विचारक था। उसने तर्कशास्त्र, कानून, दण्डशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विविध क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा के जौहर दिखाए। उसकी अधिकतर रचनाएँ अपूर्ण हैं। उसका सम्पूर्ण लेखन कार्य 148 सन्दूकों में पाण्डुलिपियों के रूप में लन्दन विश्वविद्यालय और ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित रखा हुआ है। उसकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं :–

1. **फ्रेगमेण्टस ऑन गवर्नमेंट (Fragments on Government)** : यह पुस्तक 1776 ई० में प्रकाशित हुई। यह बेन्थम की प्रथम पुस्तक है। इस पुस्तक में बेन्थम ने ब्लैकस्टोन की कानूनी टीकाओं पर तीव्र प्रहार किए हैं। इस पुस्तक ने इंग्लैण्ड के न्यायिक क्षेत्रों में हलचल मचा दी और इससे बेन्थम का सम्मान बढ़ा। इस पुस्तक में बेन्थम ने तत्कालीन इंग्लैण्ड की न्याय–व्यवस्था के दोषों व उन्हें दूर करने के उपायों का वर्णन किया है।
2. **एन इण्ट्रोडक्शन टू दि प्रिन्सिपल्स ऑफ मारल्स एण्ड लेजिस्लेशन (Introduction to the Principles of Morals and Legislation)** : इस पुस्तक का प्रकाशन 1789 ई० में हुआ। इस पुस्तक में उपयोगितावाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। यह बेन्थम की सर्वोत्तम रचना है।

   इन दो पुस्तकों के अतिरिक्त भी बेन्थम ने कुछ अन्य रचनाएँ भी लिखीं जो निम्नलिखित हैं :–

   (i) डिसकोर्सेज आन सिविल एण्ड पेनल लेजिस्लेशन (Discourses on Civil and Penal Legislation, 1802)

(ii) प्रिन्सिपल्स ऑफ इण्टरनेशनल लॉ (Principales of International Law)

(iii) ए थ्योरी ऑफ पनिशमेण्ट एण्ड रिवार्ड्स (A Theory of Punishment and Rewards, 1811)

(iv) ए ट्रीएटाईज ऑन ज्यूडिशियल एवीडेंस (A treatise on Judicial Evidence, 1813)

(v) दॉ बुक ऑफ फैलेसीज (The Book of Fallacies, 1824)

(vi) कॉन्सटीट्यूशनल कोड (Constitutional Code, 1830)

3.4 अध्ययन पद्धति (Method of Study)

बेन्थम ने अपने चिन्तन में प्रयोगात्मक पद्धति का अनुसरण किया है। उसके उपयोगितावाद का सम्बन्ध जीवन के व्यावहारिक मूल्यों से है। इसलिए उसने वास्तविक जगत् के मनुष्यों के व्यवहार को जानने के लिए अनुभवमूलक पद्धति का ही सहारा लिया है। बेन्थम ने निरीक्षण, प्रमाण और अनुभव के आधार पर ही वास्तविक तथ्यों को जानने का प्रयास किया है। वह किसी वस्तु को कल्पना के आधार पर स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है। उसका विश्वास है कि निरीक्षण – परीक्षण एवं अनुभव पर आधारित परिणाम के अनुसार ही सत्य या असत्य की पहचान हो सकती है। वह प्रत्येक वस्तु को उपयोगिता की कसौटी पर रखता है। यदि कोई वस्तु उपयोगिता की दृष्टि से निरर्थक है, तो वह त्याज्य है। उपयोगिता की धारणा मूलतः प्रयोगात्मक है। बेन्थम उस अनुभव में विश्वास करता है जो वास्तविक तथ्यों से उत्पन्न होता है और जिसका प्रयोग व्यावहारिक जगत् में किया जा सकता है। उसका मानना है कि अनुभव ही ज्ञान का स्त्रोत है और सत्यता की कसौटी है। यदि किसी तथ्य के बारे में कोई सन्देह होता है तो उसका समाधान अनुभव के द्वारा ही किया जा सकता है। इस प्रकार अनुभव विचारों का अन्तिम स्त्रोत भी है। इसके अतिरिक्त बेन्थम ने तथ्यों की बौद्धिक व्याख्या एवं वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए इन्द्रिय संसर्ग का होना ही अनिवार्य माना है। इन्द्रिय संसर्ग से संवेदना उत्पन्न होती है और संवेदना से विचार उत्पन्न होते हैं। यही संसर्ग अनुभव को प्रभावित करता रहता है। इस प्रकार बेन्थम की पद्धति संसर्ग, निरीक्षण, अनुभव

और प्रमाण पर आधारित होने के कारण आगमनात्क, अनुभवात्मक, विश्लेषणात्मक व विवेचनात्मक है। बेन्थम की प्रयोगात्मक पद्धति उसकी महत्त्वपूर्ण देन है।

3.5 प्रेरणा – स्त्रोत

किसी भी विचारक का चिन्तन तत्कालीन परिस्थितियों व अपने पूर्ववर्ती विचारकों से अवश्य प्रभावित होता है। बेन्थम भी अपवाद नहीं है। उसके विचारों के प्रेरणा – स्त्रोत निम्नलिखित हैं :–

1. बेन्थम के उपयोगितावादी का सुखवादी सिद्धान्त लॉक व ह्यूम के सुख – दुःख सिद्धान्त पर आधारित है। इस सिद्धान्त के अनुसार सुख का सम्बन्ध अच्छाई से तथा दुःख का सम्बन्ध बुराई से होता है। बेन्थम ने इस आत्मपरक मापदण्ड को वस्तुपरक मापदण्ड में बदल दिया। उसने कहा कि राज्य तभी अच्छा है, जब वह समग्र रूप में अधिकतम सुख प्रदान करता है।
2. बेन्थम ने अहस्तक्षेप का आर्थिक सिद्धान्त रिकार्डो से ग्रहण किया है। इसी पर उसने अपना उदारवाद खड़ा किया है। उसका कहना है कि राज्य को आर्थिक मामलों में कम हस्तक्षेप करना चाहिए।
3. अपने सुधारवादी दृष्टिकोण के लिए वे इटली के लेखक बेककारिया की पुस्तक 'क्राइम एण्ड पनिशमेण्ट' (Crime and Punishment) से अत्याधिक प्रभावित है। उसने इस पुस्तक के सिद्धान्तों के आधार पर ही राजनीतिक, शैक्षणिक, कानून, न्याय, दण्ड व जेल व्यवस्था में सुधार के उपाय प्रस्तुत किए।
4. बेन्थम का व्यक्तिवाद हॉब्स के विचारों पर ही आधारित है। हॉब्स की तरह बेन्थम ने भी राज्य को व्यक्ति से कम महत्त्वपूर्ण माना है। उसका मानना है कि व्यक्ति राज्य के आदेश उसी सीमा तक मानते हैं, जहाँ तक उनको फायदा होता है। वह राज्य के बन्धनों को किसी भी रूप में अस्वीकार करते हैं।
5. बेन्थम के राजनीतिक विचारों का सबसे महत्त्वपूर्ण स्त्रोत प्रीस्टले का सरकार सम्बन्धी निबन्ध 'Priestly is Essary on Government' है। इसमें प्रीस्टल ने ह्योसन की पुस्तक से लिया गया वाक्य 'अधिकतम संख्या का अधिकतम सुख' का वर्णन किया है। इस वाक्य के आधार पर बेन्थम ने राज्य का उद्देश्य 'अधिकतम लोगों

का अधिकतम सुख' बताया। उसने कहा कि अधिकतम सुख के आधार पर ही नागरिकों को राज्य के कानूनों का पालन करना चाहिए।

इस प्रकार बेन्थम में अनेक पूर्ववर्ती विचारकों से प्रेरणा ग्रहण करके अपने राजनीतिक चिन्तन रूपी भवन की आधारशिला रखी। अपनी अनुभववादी पद्धति का सहारा लेकर उसने पूर्ववर्ती विचारों का इंग्लैण्ड की तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार ढालकर अपने उपयोगितावादी सिद्धान्त व अन्य सुधारवादी कार्यक्रमों की रूपरेखा निर्धारित की।

3.6 उपयोगितावाद का सिद्धान्त (Theory of Utilitarianism)

उपयोगितावाद का सिद्धान्त बेन्थम की सबसे महत्त्वपूर्ण एवं अमूल्य देन है। उसके अन्य सभी राजनीतिक विचार उसके उपयोगितावाद पर ही आधारित है। लेकिन उसे इसका प्रवर्तक नहीं माना जा सकता। रोचक बात यह है कि बेन्थम ने कहीं भी उपयोगितावाद शब्द का प्रयोग नहीं किया। बेन्थम के उपयोगितावाद दर्शन का वर्णन उसकी दो पुस्तकों – 'फ्रैग्मेण्ट्स ऑन दि गवर्नमेंट' (Fragments on the Government) तथा 'इण्ट्रोडक्शन टू दॉ पिंसिपल्स ऑफ मॉरल्स एण्ड लेजिस्लेशन' (Introduction to the Principles of Morals and Legislation) में मिलता है।

उपयोगितावाद का विकास (Development of Utilitarianism)

उपयोगितावाद के सर्वप्रथम आचारशास्त्र के एक सिद्धान्त के रूप में प्राचीन यूनान के एपीक्यूरियन सम्प्रदाय में ही दर्शन होते है। इस सम्प्रदाय के अनुसार मनुष्य पूर्णतया सुखवादी है। वह सुख की ओर भागता है तथा दुःखों से बचना चाहता है। इसके बाद सामाजिक समझौतावादियों ने भी 17 वीं शताब्दी में इसका कुछ विकास किया। हॉब्स ने कहा कि मनुष्य पशुवत आचरण करने वाला एक सुखवादी प्राणी है। लॉक तथा पाश्चात्य दर्शन के सिरेनाक वर्ग के प्रचारकों ने भी उपयोगितावाद का विकास किया। डेविड ह्यूम ने भी इसका विकास किया। आगे चलकर ह्योसन ने अपनी पुस्तक 'नैतिक दर्शन पद्धति' (System of Moral Philosophy) में उपयोगितावाद के मूलमन्त्र 'अधिकतम संख्या के अधिकतम सुख' (The Greatest Happiness of the Greatest Number) का प्रथम बार प्रयोग किया। आगे प्रीस्टले ने भी इसी मूलमन्त्र का

प्रयोग किया। इसके बाद बेन्थम ने भी प्रीस्टले के निबन्ध से उपयोगितावाद की प्रेरणा ग्रहण की। बेन्थम ने बताया कि राज्य की सार्थकता तभी है जब वह अधिकतम लोगों के लिए अधिकतम सुख की व्यवस्था करे।

उपयोगितावाद का अर्थ (Meaning of Utilitarianism)

उपयोगितावाद राजनीतिक सिद्धान्तों का ऐसा कोई संग्रह नहीं है जिसमें राज्य और सरकार के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया हो। यह मानव आचरण की प्रेरणाओं से सम्बन्धित एक नैतिक सिद्धान्त है। उपयोगितावाद 18वीं शताब्दी के आदर्शवाद के विरूद्ध एक प्रतिक्रिया है जो इन्द्रियानुभववाद की स्थापना करता है। उपयोगितावाद की दृष्टि में उपयोगितावाद का अर्थ – 'अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख' है। इसका अर्थ "किसी वस्तु का वह गुण है जो लाभ, सुविधा, आनन्द, भलाई या सुख प्रदान करता है तथा अनिष्ट, कष्ट, बुराई या दुःख को पैदा होने से रोकता है।" बेन्थम के मतानुसार – "उपयोगिता किसी कार्य या वस्तु का वह गुण है जिससे सुखों की प्राप्ति तथा दुःखों का निवारण होता है।" बेन्थम ने आगे कहा है कि उपयोगितावाद की अवधारणा हमें यह बताती है कि हमें क्या करना चाहिए तथा क्या नहीं करना चाहिए। यह हमारे जीवन के समस्त निर्णयों की आधारशिला है। उपयोगितावाद का वास्तविक अर्थ सुख है। व्यक्ति ही नहीं सम्पूर्ण समाज का लक्ष्य भी सुख की प्राप्ति है।

उपयोगितावाद की विशेषताएँ (Features of Utilitarianism)

बेन्थम के उपयोगितावाद के सिद्धान्त की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :–

1. **सुख और दुःख पर आधारित (Based on Pleasure and Pain) :** बेन्थम का उपयोगितावादी सिद्धान्त सुख और दुःख के दो आधारों पर आधारित है। बेन्थम का मानना है कि जो कार्य हमें सुख देता है, उपयोगी हैं तथा जो कार्य दुःख पहुँचाया है, उपयोगी नहीं। बेन्थम का मानना है कि प्रकृति ने मनुष्य को सुख और दुःख की दो शक्तियों के अधीन रखा है। यही शक्तियाँ हमे बताती हैं कि मनुष्य को क्या करना चाहिए और क्या नहीं। सही और गलत के मानदण्ड उन शक्तियों से बँधे हुए हैं।

2. **सुख की प्राप्ति और दुःख का निवारण (Attainment of Pleasure and Avoidance of Pain) :** बेन्थम का मत है कि जो वस्तु सुख प्रदान करती है, वह अच्छी है और उपयोगी है। जिस कार्य या वस्तु से मनुष्य को दुःख प्राप्त होता है वह अनुपयोगी है। मानव के समस्त कार्यों की कसौटी उपयोगितावाद है। बेन्थम का मानना है कि जिस कार्य से प्रसन्नता या आनन्द में वृद्धि होती है तो वह कार्य उपयोगी है। उससे सुख की प्राप्ति होती है और दुःख का निवारण होता है। अतः उपयोगितावाद का सिद्धान्त सुख की प्राप्ति और दुःख के निवारण का सिद्धान्त है।

3. **सुख व दुःख का वर्गीकरण (Classification of Pleasure and Pain)** : बेन्थम ने सुख – दुःख के दो भागों – सरल व जटिल में विभाजित किया है। उसने अनुसार सरल सुख 14 प्रकार के तथा सरल दुःख 12 प्रकार के हैं। सरल सुखों या दुःखों को परस्पर मिलाने से जटिल सुख या दुःख का जन्म होता है।

(i) **सरल सुख :** (1) मित्रता का सुख (2) इन्द्रिय सुख (3) सहायता का सुख (4) सम्पर्क सुख (5) दया का सुख (6) स्मरण – शक्ति का सुख (7) आशा का सुख (8) सत्ता का सुख (9) धार्मिकता का सुख (10) ईर्ष्या का सुख (11) उदारता का सुख (12) सम्पत्ति का सुख (13) कुशलता का सुख (14) यात्रा का सुख

(ii) **सरल दुःख –** (1) अपमान का दुःख (2) धर्मनिष्ठा का दुःख (3) सम्पर्क का दुःख (4) कल्पना का दुःख (5) शत्रुता का दुःख (6) इन्द्रिय दुःख (7) अभाव का दुःख (8) स्मरण शक्ति का दुःख (9) उदारता का दुःख (10) आशा का दुःख (11) ईर्ष्या का दुःख (12) अकुशलता का दुःख।

4. **सुख व दुःख के स्त्रोत (Sources of Pleasure and Pain)** : बेन्थम ने सुख – दुःख के चार स्त्रोत – धर्म, राजनीतिक, नैतिकता तथा भौतिक मानते हैं। धार्मिक सुख धर्म में आस्था रखने से व धार्मिक व्यवस्था को स्वीकार करने से प्राप्त होता है। जैसे कुम्भ के मेले में स्नान करना। यदि वहाँ कोई अनहोनी हो जाए तो उसे धार्मिक दुःख कहा जाएगा। राजनीतिक सुख राज्य

की नीतियों व कार्यों से प्राप्त होता है। जैसे सरकार द्वारा धर्मनिपेक्ष नीति का पालन करना। यदि सरकार कोई ऐसा कार्य करे जो जन – कल्याण के विपरीत हो तो उससे प्राप्त दुःख राजनीतिक दुःख होगा। व्यक्ति को नैतिक सुख उसके नैतिक आचरण से प्राप्त होता है। जैसे दूसरों की सहायता करना। यदि आवश्यकता पड़ने पर तुम्हें कोई सहायता न मिले तो उससे प्राप्त दुःख नैतिक दुःख कहलाएगा। भौतिक सुख प्राकृतिक वस्तुओं से प्राप्त होता है। जैसे सन्तुलित वर्षा का होना सभी को सुख प्रदान करता है। यदि वर्षा अत्यधिक मात्रा में होकर जनजीवन को अस्त–व्यस्त कर दे तो इससे प्राप्त दुःख भौतिक या प्राकृतिक दुःख कहलाएगा।

5. **सुखों में मात्रात्मक अन्तर (Quantitative difference between Pleasures) :** बेन्थम का मानना है कि सभी सुख गुणों में एक जैसे होते हैं। इसलिए उनमें गुणात्मक की बजाय मात्रात्मक अन्तर पाया जाता है, उसका कहना है कि "पुष्पिन (बच्चों का खेल) उतना ही अच्छा है जितना कविता पढ़ना" खेलने से भौतिक – सुख प्राप्त होता है जबकि कविता पढ़ने से मानसिक सुख। दोनों सुखी की मात्रा को मापा जा सकता है। इनकी गणना सम्भव है। बेन्थम ने कहा है कि एक कील भी उतना ही दर्द करती है जितना कर्कश आवाज। अतः सुखों में मात्रात्मक अन्तर है, गुणात्मक नहीं।

6. **सुखों –दुखों का मापन (Measurement of Pleasures and Pains)** : बेन्थम के अनुसार सुखों व दुःखों को परिमाणिक तौर पर मापा जा सकता है। इससे कोई अपने सुख या दुःख को माप सकता है। यह मापन ही किसी वस्तु या कार्य को सुख – दुःख के आधार पर अच्छा या बुरा प्रमाणित कर सकता है। ये सुख – दुःख मानवीय क्रियाओं के आचार व उद्देश्य होते हैं। इन सुखों को फेलिसिफिक केलकुलस द्वारा मापा जाता है।

7. **सुखवादी मापक यन्त्र (Felicific Calculus)** : बेन्थम का विचार है कि सुख – दुःख को तुलनात्मक आधार पर परखा जा सकता है। बेन्थम ने सुख – दुःख को मापन की जो पद्धति सुझाई है, उसे सुखवादी मापक यन्त्र (Felicific Calculus) का नाम दिया गया है। बेन्थम का मानना है कि

सुख–दुःख का गणित के सहारे पारिमाणिक नापतोल (Mathematical Computation), सम्भव है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत तीव्रता (Intensity), अवधि (Duration), निश्चिन्तता (Certainty), अनिश्चित्तता (Uncertainty), सामीप्य (Propinquity), अन्य सुख उत्पन्न करने की क्षमता (Fecundity), विशुद्धता (Purity) व विस्तार (Extent) के आधार पर सुख – दुःख का मापन किया जाता है। बेन्थम ने स्पष्ट किया है कि जो सुख तीव्र होता है, वह अधिक समय तक टिका रहता है। कम तीव्र सुख कम समय तक रहते हैं। निश्चित सुख अनिश्चित की तुलना में अधिक मात्रा वाला होता है। इस प्रकार अन्य तथ्यों के आधार पर भी सुख – दुःख का निरूपण किया जा सकता है। बेन्थम ने सुख – दुःख की गणना करते समय सुखों के समस्त मूल्यों को एक तरफ तथा दुःखों के समस्त मूल्यों को दूसरी तरफ जोड़ने का सुझाव दिया है। यदि एक–दूसरे को आपस में घटाने से सुख बच जाए तो वह कार्य उचित है अन्यथा अनुचित। इस प्रकार इस सिद्धान्त के द्वारा बेन्थम ने यह सिद्ध किया है कि कोई कार्य उचित है या अनुचित।

8. **परिणामों पर जोर (Emphasis on Results) :** बेन्थम का उपयोगितावाद का सिद्धान्त परिणामों पर आधारित है, नीयत पर नहीं। बेन्थम का मानना है कि सुख और दुःख स्वयं ही उद्देश्य हैं। इनके होते हुए अच्छे या बुरे इरादों को मानने की आवश्यकता नहीं। किसी भी कार्य की अच्छाई या नैतिकता इस बात पर निर्भर नहीं करती कि वह किस उद्देश्य को लेकिन किया जाता है, बल्कि इस बात पर निर्भर करती है कि उसके परिणाम क्या निकलते हैं। बेन्थम का मानना है कि किसी भी विधि या संस्था की उपयोगिता की जाँच इस आधार पर ही हो सकती है कि स्त्रियों या पुरूषों पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है। बेन्थम नीयत (Motive) को उसी सीमा तक स्वीकार करता है, जहाँ तक वह परिणाम को निर्धारित करती है। इस प्रकार उसने नैतिक बुद्धि, ईश्वरीय इच्छा, कानून के नियम आदि को तिलांजलि दे दी। उसने किसी वस्तु के परिणाम को ही सत्य – असत्य, अच्छाई – बुराई का मापदण्ड स्वीकार किया है।

9. **राज्य का उद्देश्य अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख है (Greatest Happiness of the Greatest Number is the Aim of the State) :** बेन्थम के अनुसार राज्य के वे कार्य ही उपयोगी हैं जो व्यक्तियों को लाभ पहुँचाते हैं। सभी व्यक्ति राज्य के आदेशों का पालन इसलिए करते हैं, क्योंकि वे उनके लिए उपयोगी हैं। राज्य का उद्देश्य किसी एक व्यक्ति को सुख प्रदान करना नहीं है बल्कि अधिक से अधिक व्यक्तियों को सुख प्रदान करना है। इसलिए बेन्थम कहता है कि व्यक्ति को अधिक से अधिक लोगों के कल्याण में राज्य को सहयोग देना चाहिए।

10. **अनुशस्तियों का सिद्धान्त :** बेन्थम का मानना है कि व्यक्ति के अधिकतम सुख तथा व्यक्तियों के अधिकतम सुख के मध्य संघर्ष की सम्भावना को देखते हुए व्यक्ति पर अंकुश लगाना आवश्यक होता है ताकि वह दूसरों के सुख को कोई हानि नहीं पहुँचाए। इसलिए दूसरों के सुखों का ध्यान रखने में व्यक्ति को प्रेरित करने के लिए कुछ अनुशस्तियों की आवश्यकता पड़ती है। सुख की अनुशस्तियाँ शारीरिक, नैतिक, धार्मिक और राजनीतिक 4 प्रकार की होती है। धार्मिक अनुशस्ति व्यक्ति के आचरण को ठीक करती है। नैतिक अनूशस्ति व्यक्ति के मन को अनुशासित करती है। यह सदैव उपयोगी होती है। राजनीतिक अनुशस्ति राज्य द्वारा पुरस्कार और दण्ड के रूप में व्यक्तियों पर लगाई जाती है। इसे कानून अनुशस्ति भी कहा जाता है।

उपयोगितावाद की आलोचनाएँ (Criticisms of Utilitatianism)

बेन्थम ने अपने उपयोगितावाद के सिद्धान्त को सरल और सुबोध बनाने का इतना अधिक प्रयास किया कि इस सिद्धान्त में अनेक दोष उत्पन्न हो गए। आलोचकों ने उसके इस सिद्धान्त को भ्रम एवं विरोधाभास का पिटारा कह दिया। इसकी आलोचना के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं :–

1. **मौलिकता का अभाव (Lack of Originality)** : यह सिद्धान्त बेन्थम की मौलिक देन नहीं है। बेन्थम ने प्रीस्टले के विचारों को ही नया रूप देने का प्रयास

किया है। बेन्थम ने भी प्रीस्टले के ही इस विचार को उधार लिया है कि राज्य का उद्देश्य 'अधिकतम लोगों को अधिकतम सुख' प्रदान करना है। 'अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख' का विचार प्रीस्टले के माध्यम से बेन्थम तक पहुँचा। अतः इसमें मौलिकता का अभाव है।

2. **अमनोवैज्ञानिक सिद्धान्त (Unpsychological Theory)** : बेन्थम ने मानव – प्रकृति को कोरा सुखवादी माना है। उसके अनुसार मनुष्य घोर स्वार्थी और अपने सुख के लिए प्रयास करने वाला प्राणी है। किन्तु सत्य तो यह है कि मनुष्य स्वार्थी न होकर परोपकारी भी है। वह दूसरों के लिए भी जीवन जीता है। वह सुख की भावना से नहीं बल्कि देश – प्रेम, बलिदान, त्याग आदि भावनाओं से भी प्रेरित होकर कार्य करता है। ईसा मसीह ने मृत्यु को गले क्यों लगाया ? राम वन में क्यों गए ? इन सब के पीछे एक ही कारण था – परोपकार। इस प्रकार बेन्थम ने आध्यात्मिक विकास एवं उच्च आदर्शों की अवहेलना करके केवल सुख को ही महत्त्व दिया है। अतः यह सिद्धान्त अमनोवैज्ञानिक है जो मानव – प्रकृति का गलत चित्रण करता है।

3. **स्पष्टता का अभाव (Lack of Clarity) :** बेन्थम ने सब कार्यों का आधार 'अधिकतम संख्या के अधिकतम सुख' के विचार को माना है। बेन्थम ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि प्रधानता व्यक्तियों की संख्या को दी जाएगी या सुख की मात्रा को। उदाहरण के लिए हम मान लें कि कानून बनाने से 10 मिल मालिकों में से प्रत्येक को 1000 रूपये का लाभ होता है किन्तु मजदूरों की मजदूरी में 2 रूपये प्रति मजदूर के हिसाब से 1000 मजदूरों को 2000 रूपये की हानि होती है। मालिकों को कुल 10000 रूपये का लाभ होता है। इसमें देखा जाए तो 10 मालिकों का लाभ 1000 मजदूरों की हानि से अधिक है। अतः कानून बनाना उपयोगी है। यदि अधिकतम लोगों की दृष्टि से देखा जाए तो 1000 मजदूरों की हानि को महत्त्व देकर कानून बनाया जाए। ऐसी अवस्था में अधिकतम संख्या व अधिकतम सुख में अन्तर्विरोध उत्पन्न होता है। इसलिए उपयोगिता का सिद्धान्त यह स्पष्ट नहीं करता कि कानून

किसके पक्ष में बनाया जाए। अतः इस विषय में यह सिद्धान्त पद – प्रदर्शन न कर पाने के कारण अस्पष्ट व दोषपूर्ण है।

4. **सुखवादी मान्यता दोषपूर्ण है :** बेन्थम केवल सुख को ही मानवीय क्रियाओं का एकमात्र प्रेरक कारण मानते हैं। आलोचकों का कहना है कि यदि संसार में केवलमात्र सुख को ही प्रेरक मान लिया जाए तो सुखों की प्राप्ति की होड़ लग जाएगी। इससे कर्त्तव्य व स्वार्थ का संघर्ष समाप्त हो जाएगा। यदि भौतिक सुख ही सब कुछ होता तो कवि कविता की रचना क्यों करता ? महात्मा बुद्ध राजसी ठाठबाट का त्याग क्यों करते ? जिस प्रकार सुख की खोज मानव – स्वभाव का अंग है, वैसे ही देशभक्ति, त्याग, परोपकार आदि उदात्त भावनाएँ भी उसके स्वभाव का अंग है। मानव जीवन आदर्शों पर आधारित है, न कि सुखवादी दृष्टिकोण पर।

5. **सुखवादी मापन यन्त्र दोषपूर्ण है :** बेन्थम द्वारा बताई गई इस विधि से सुखों का मात्रा को सही ढंग से मापना असम्भव है। बेन्थम ने सुख मापन के विभिन्न तत्त्वों की तुलना करने का मूल्यांकन करने की निश्चित पद्धति नहीं बताई है। उदाहरण के लिए यदि एक सुख की प्रगाढ़ता (Intensity) कम तथा अवधि (Duration) अधिक हो तथा दूसरे की प्रगाढ़ता (Intensity) अधिक तथा अवधि (Duration) कम हो तो दोनों सुखों की मात्रा और तारतम्य का निर्धारण कैसे हो ? इस विषय पर बेन्थम कुछ नहीं कह सका। अतः यह अनुपयोगी पद्धति है। व्यक्तियों की रूचि, समय और परिस्थितियों के कारण सुख – दुःख में भी परिवर्तन आता रहता है। एक समय पर सुख देने वाली वस्तु दूसरे समय दुःख भी प्रदान कर सकती है। रूचि वैचित्रय के कारण अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख का अनुमान लगाना कठिन हो जाता है। अतः सुखवादी मापन यन्त्र में अस्पष्टता तथा अनिश्चितता है।

6. **बहुसंख्यकों की निरंकुशता :** बेन्थम का सिद्धान्त प्रत्येक व्यक्ति के सुख पर नहीं बल्कि बहुसंख्या के सुख पर जोर देता है। यदि बहुसंख्यक अपने आनन्द के लिए अलपसंख्यकों को दास भी बनाना चाहें तो उचित है। इस दशा में अल्पसंख्यकों का सुख बहुसंख्यकों के सुख के नीचे हमेशा दफन

रहेगा। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से यह सिद्धान्त बहुसंख्यकों को अत्याचार को उचित व न्यायपूर्ण ठहराता है। इसलिए यदि सुख स्वाभाविक प्रवृति हे तो उसे प्राप्त करने का अधिकार सभी को मिलना चाहिए। अतः यह सिद्धान्त बहुसंख्यकों के अत्याचार व अन्याय को प्रोत्साहन देता है।

7. **नैतिकता की उपेक्षा :** बेन्थम ने केवल भौतिक सुखों के आधार पर अपना सिद्धान्त खड़ा किया हैं उसने सुख के ही जीवन चरम लक्ष्य माना है। उसकी दृष्टि में उच्च नैतिक भावना, अन्तःकरण और धर्म–अधर्म का कोई महत्त्व नहीं है। उदाहरणार्थ पाँच डाकू, सज्जन पुरूष को लूटकर उसे जान से मार दें तो इससे अधिकतम का ही लाभ हुआ। उस सज्जन व्यक्ति की हानि का कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। किन्तु नैतिक रूप से ऐसा नहीं होना चाहिए। अतः बेन्थम ने नैतिकता की घोर उपेक्षा करके अव्यवस्था को ही जन्म देने वाली स्थिति पैदा की है।

8. **सुखों के गुणात्मक भेद की उपेक्षा** – बेन्थम की दृष्टि से विभिन्न वस्तुओं और कार्यों से प्राप्त सुख मात्रात्मक होता है, गुणात्मक नहीं। उसका कहना है कि आनन्द का जितनी मात्रा घर पर रहने से मिलती है, उतनी ही घूमने से नहीं मिलती है। दोनों सुखों में मात्रात्मक अन्तर होता है। लेकिन सत्य तो यह है कि एक चित्रकार को चित्र बनाने में जो आनन्द प्राप्त होता है, वह उस चित्र को देखने वाले के आनन्द से अलग होता है। स्वादिष्ट वस्तुओं से मिलने वाला आनन्द, खेलने से प्राप्त होने वाले आनन्द से भिन्न है। इन सब में मात्रात्मक भेद के साथ – साथ गुणात्मक भेद भी होता है। घर पर लेटे रहना एक निकृष्ट कोटि का आनन्द है, एवरेस्ट पर चढ़ना एक उत्कृष्ट कोटि का आनन्द है। अतः बेन्थम का सिद्धान्त गुणों की उपेक्षा करने के कारण दोषपूर्ण है। बेन्थम के अनुयायी जे०एस०मिल० ने भी इस भूल को स्वीकार किया।

9. **शासन विषयक सिद्धान्त :** बेन्थम ने राज्य और सरकार में कोई अन्तर नहीं किया है। वह व्यक्ति द्वारा सुख की प्राप्ति के लक्ष्य पर बल देता है। वह

मनुष्य के और राज्य के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन नहीं करता है, राज्य के सैद्धान्तिक पक्ष का नहीं।

10. **अतर्कसंगत :** बेन्थम ने एक सुख से दूसरे सुख की उत्पत्ति की बात तो कही है लेकिन इस सुख के जनक की अवहेलना की है। प्रत्येक सुख की उत्पत्ति के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है। बेन्थम इसका कारण बताने में असफल रहे हैं। अतः यह सिद्धान्त तर्कसंगत नहीं है।

11. **सभी सुख समान नहीं होते :** बेन्थम ने भौतिक सुख और मानसिक सुखों को समान माना है। शरीर और आत्मा की अनुभूति के उद्देश्य और मात्रा असमान होते हैं। बेन्थम ने मात्रात्मक आधार पर सुखों में अन्तर मानकर मनुष्य को पशु स्तर तक गिरा दिया है। मैक्सी का कहना है – "बेन्थम की धारणा के अनुसार मनुष्य सुअर है।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बेन्थम का उपयोगितावाद का दर्शन गलत धारणाओं पर आधारित है। बेन्थम ने सुख और आनन्द को समानार्थी मान लिया है। यह अन्तर्विरोधों से ग्रस्त है। यह गुणात्मक पहलू की उपेक्षा करता है। उसका सुखवादी मापन यन्त्र वैज्ञानिक तरीका नहीं है। 'सबसे बड़ा सुख' और 'सबसे बड़ी संख्या' के मध्य कोई तार्किक सम्बन्ध नहीं है। यह सिद्धान्त बहुमत की निरंकुशता को बढावा देता है। अतः यह सिद्धान्त भ्रान्त, भौतिक व एकांगी है। इसमें यथार्थवाद व मनौवैज्ञानिकता का पुट नहीं है। इसलिए यह सिद्धान्त अस्पष्ट व अपूर्ण है। लेकिन अनेक दोषों के बावजूद भी यह सिद्धान्त लोक–कल्याणकारी राज्य की उदात्त भावना से प्ररित है। आधुनिक प्रजातन्त्र में इसका विशेष महत्त्व है।

3.7 बैन्थम के राजनीतिक विचार (Political Ideas of Bentham)

राजनीतिक दर्शन के इतिहास में यह एक विवादास्पद मुद्दा रहा है कि क्या बैन्थम को एक राजनीतिक दार्शनिक माना जाए या नहीं। कई लेखक उसको राजनीतिक दार्शनिक की बजाय एक राजनीतिक सुधारक मानते है। उसने अनुसार बेन्थम का ध्येय किसी राजनीतिक सिद्धान्त का प्रतिपादन करना नहीं था बल्कि अपने सुधारवादी कार्यक्रम की पृष्ठभूमि के लिए राज्य के सम्बन्ध में कुछ विचार प्रस्तुत

करना था ताकि इंग्लैण्ड की शासन प्रणाली में वांछित सुधार किया जा सकें। इसके प्रमुख राजनीतिक विचार उसक सुधारवादी कार्यक्रम का ही एक हिस्सा हैं। उसके प्रमुख राजनीतिक विचार निम्नलिखित हैं :–

1. **राज्य सम्बन्धी विचार (Views on State)** : बेन्थम राज्य को एक कृत्रिम संस्था मानता है। उसने राज्य की उत्पत्ति के 'सामाजिक समझौता सिद्धान्त' का खण्डन किया है। वह राज्य की उत्पत्ति के सामाजिक समझौता को नकारते हुए कहता है कि इस प्रकार का समझौता कभी हुआ ही नहीं था और यदि हुआ भी हो तो वर्तमान पीढ़ी को इसे स्वीकार करने के लिए बाध्य करना न्यायसंगत नहीं है। उसका कहना है कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि समझौता हुआ हो। उसका कहना है कि यदि समझौता होना स्वीकार कर भी लिया जाए तो समझौते द्वारा आज्ञा पालन के कर्त्तव्य की कोई निश्चित व्याख्या नहीं की जा सकती। बेन्थम का मानना है कि मनुष्य द्वारा कानून तथा सरकार की अधीनता स्वीकार करने का मुख्य कारण मूल समझौता न होकर वर्तमान हित व उपयोगिता है। सरकारों का अस्तित्व इसलिए है कि वे सुख को बढ़ाती हैं। मनुष्य कानून और राज्य की आज्ञा का पालन इसलिए करते हैं कि वे जानते हैं कि "आज्ञा पालन से होने वाली संभावित हानि आज्ञा का पालन न करने से होने वाली हानि से कम होती है।" इसलिए राज्य की उत्पत्ति का आधार सामाजिक उपयोगिता है न कि सामाजिक समझौता। उसके अनुसार – "राज्य एक काल्पनिक संगठन है जो व्यक्तियों के हितों का योग मात्र है।" राज्य का हित उसमें रहने वाले व्यक्तियों के हितों का योग मात्र होता है। बेन्थम के मतानुसार – "राज्य व्यक्तियों का एक समूह है जिसका संगठन उपयोगिता अथवा सुख की वृद्धि करने के लिए किया गया है।" उसके अनुसार राज्य का ध्येय या लक्ष्य न तो व्यक्ति के व्यक्तित्व को निखारना है और न ही समुदाय के सद् और नैतिक जीवन की उन्नति करना है बल्कि वह तो 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' में वृद्धि करना है।

इस प्रकार बैन्थम राज्य की उत्पत्ति के 'सामाजिक समझौता सिद्धान्त', 'आदर्शवादी सिद्धान्त', 'आंगिक सिद्धान्त', आदि का खण्डन करते हुए राज्य की उत्पत्ति का आधार सामाजिक उपयोगिता को मानते हुए राज्य को एक कृत्रिम संस्था स्वीकार करता है। उसके अनुसार राज्य व्यक्तियों के हितों का योग मात्र है। वह राज्य को एक साध्य न मानकर एक साधन मात्र मानता है जिसका उद्देश्य सार्वजनिक हित में वृद्धि करने के साथ – साथ 'अधिकतम लोगों के लिए अधिकतम सुख' को खोजना है। अतः राज्य की उत्पत्ति का यह सिद्धान्त सीमित व संकुचित है। इसके अनुसार राज्य व्यक्ति के सुख का साधन मात्र है। यह एक व्यक्तिवादी धारणा है।

राज्य की विशेषताएँ (Features of the State) : बेन्थम के सिद्धान्त के अनुसार राज्य को निम्नलिखित विशेषताएँ है :

(i) यह अधिकतम सुख को बढ़ाने वाला एक मानवी अभिकरण है।

(ii) यह व्यक्ति के अधिकारों का स्त्रोत है।

(iii) यह व्यक्ति के हितों में वृद्धि करने का एक साधन है।

(iv) इसका लक्ष्य अपने नागरिकों के सुख में वृद्धि करना है।

(v) यह दण्ड–विधान द्वारा नागरिकों को अनुचित कार्यों को करने से रोकने वाला साधन है।

इस प्रकार राज्य अपने नागरिकों के हितों को अधिकतम सीमा तक बढ़ने के लिए कानून का सहारा लेता है। वह कानून को ढाल बनाकर 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' में वृद्धि का मार्ग में आने वाली रूकावटों पर अंकुश लगाता है।

राज्य के कार्य (Functions of the State) : बेन्थम के अनुसार राज्य के कार्य सकारात्मक न होकर नकारात्मक हैं। उसने राज्य को व्यक्ति की अपेक्षा कम महत्त्व प्रदान किया है। उसके अनुसार राज्य के निम्नलिखित कार्य हैं :–

(i) राज्य लोगों के सुख में वृद्धि तथा दुःख में कमी करने का प्रयास करता है।

(ii) वह नागरिकों को गलत कार्यों को करने से रोककर उनके आचरण का नियन्त्रित करता है।

इस प्रकार राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में बेन्थम का दृष्टिकोण नकारात्मक ही रहा है। उसने व्यक्तिवादी और लेसेज – फेअर (Individualist and Laissez - faire) की धारणा पर ही अपने राज्य सम्बन्धी विचारों को खड़ा किया है। उसका राज्य नागरिकों के व्यक्तित्व का विकास करने की बजाय उनके सुख की वृद्धि करना है। अतः बेन्थम की दृष्टि में नागरिकों का स्थान राज्य से उच्चतर है ।

2. **सरकार सम्बन्धी विचार (Views on Government)** : बेन्थम के सरकार या शासन सम्बन्धी विचार भी उसके उपयोगितावादी सिद्धान्त पर ही आधारित है। बेन्थम राज्य और सरकार में अन्तर करते हुए सरकार को राज्य का एक छोटा सा संगठन मानता है तो कानून तथा अधिकतम सुख के लक्ष्य को कार्यान्वित करता है। बेन्थम उपयोगितावाद के सिद्धान्त की कसौटी पर विभिन्न शासन प्रणालियों को परखकर गणतन्त्रीय सरकार का ही समर्थन करता है। उसका विश्वास है कि "अन्ततोगत्वा प्रतिनिधि लोकतन्त्र ही एक ऐसी सरकार है जिसमें अन्य सभी प्रकार की सरकारों की तुलना में अधिकतम लोगों की अधिकतम सुख प्राप्त कराने की क्षमता है।" उसके विचारानुसार गणतन्त्रीय सरकार में कुशलता, मितव्ययिता, बुद्धिमत्ता तथा अच्छाई जैसे गुण पाए जाते हैं। उसके विचार में राजतन्त्र बुद्धिमानों का शासन तो है, परन्तु वह 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' का पालन करने में असक्षम है। गणतन्त्र में कानून बनाने के अधिकार जनता के पास होने के कारण कानून जनता के हित में बनते हैं और 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' का लक्ष्य सरलता से प्राप्त हो सकता है। इसी तरह कुलीनतन्त्र में बुद्धिमत्ता तो पाई जाती है, क्योंकि यह गुणी और अनुभवी व्यक्तियों द्वारा संचालित होती है, लेकिन इसमें ईमानदारी कम पाई जाती है। यह शासन व्यवस्था भी "अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' के सिद्धान्त की उपेक्षा करती है। गणतन्त्र में जनता व शासक के हितों में समानता

रहती है। इसलिए 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' का ध्येय गणतन्त्र में ही प्राप्त किया जा सकता है, अन्य शासन – प्रणालियों में नहीं। अतः गणतन्त्रीय सरकार ही सर्वोत्तम सरकार है।

3. **सम्प्रभुता सम्बन्धी विचार (Views on Sovereignty)** : बेन्थम ने राज्य की सम्प्रभुता का समर्थन किया है। उसका मानना है कि शासक सभी व्यक्तियों और सब बातों के सम्बन्ध में कानून बना सकता है। चूँकि कानून आदेश होता है, अतएव यह सर्वोच्च शक्ति का ही आदेश हो सकता है। बेन्थम का मानना है कि राज्य का अस्तित्व तभी तक रहता है, जब तक सर्वोच्च सत्ता की आज्ञा की अनुपालन लोगों द्वारा स्वभावतः की जाती है। बेन्थम के अनुसार राज्य सम्प्रभु होता है, क्योंकि उसका कोई गैर – कानूनी नहीं होता। कानूनी दृष्टि से सम्प्रभु निरपेक्ष एवं असीमित होता है। उस पर प्राकृतिक कानून एवं प्राकृतिक अधिकार का कोई बन्धन नहीं हो सकता। लेकिन बेन्थम के अनुसार सम्प्रभु निरंकुश, अमर्यादित एवं अपरिमित नहीं हो सकता। बेन्थम के अनुसार व्यक्ति उसी सीमा तक सम्प्रभु की आज्ञा का पालन और कानून का आदर करते हैं, जिस सीमा तक वैसा करना उनके लिए लाभदायक और उपयोगी होता है। बेन्थम के मतानुसार शासक कानून बनाने का अधिकार तो रखता है लेकिन वह उसी सीमा तक कानून बना सकता है जहाँ तक व्यक्तियों के अधिकमतम हित के लक्ष्य की प्राप्ति होती हो। यदि कानून व्यक्तियों के लिए लाभदायक व उपयोगी न हों तो जनता का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह शासक व उसके द्वारा बनाए गए कानूनों का प्रतिरोध करे।

इस प्रकार हॉब्स की तरह बेन्थम भी कानून – निर्माण को सम्प्रभु का सर्वोच्च अधिकार मानता है लेकिन वह कार्यपालिका और न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकारों को सम्प्रभु को नहीं सौंपता। वह शासक की असीमित शक्तियों के विरूद्ध है। उसके अनुसार शासक समस्त सामाजिक सत्ता का केन्द्र नहीं है। उसका सम्प्रभु तो कानून निर्माण के क्षेत्र में ही सर्वोच्च है, अन्य में नहीं।

4. **प्राकृतिक अधिकारों सम्बन्धी धारणा (Views on Natural Rights)** : बेन्थम ने प्राकृतिक अधिकारों की धारणा का खण्डन करते हुए प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धान्त को मूर्खतापूर्ण, काल्पनिक, आधारहीन व आडम्बरपूर्ण बताया है। उसने कहा है – "प्राकृतिक अधिकार बकवास मात्र हैं – प्राकृतिक और हस्तान्तरणीय अधिकार आलंकारिक बकवास हैं – शब्दों के ऊपर भी बकवास है।" उसके मतानुसार प्रकृति एक अस्पष्ट शब्द हैं, इसलिए प्राकृतिक अधिकारों की धारणा भी निरर्थक है। उसके मतानुसार अधिकार प्राकृतिक न होकर कानूनी हैं जो सम्प्रभु की सर्वोच्च इच्छा का परिणाम हैं। उसके अनुसार पूर्ण स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से असम्भव है, इसलिए अधिकार प्राकृतिक न होकर कानूनी हैं।

   बेन्थम ने टामस पेन तथा गॉडविन जैसे प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धान्त के समर्थक विचारकों का खण्डन करते हुए कहा कि प्राकृतिक अधिकार केवल एक प्रलाप और मूर्खता का नंगा नाच हैं। उसका मानना है कि प्राकृतिक अधिकारों का निर्माण केवल सामाजिक परिस्थितियों में होता है। वे अधिकारों का निर्माण केवल सामाजिक परिस्थितियों में होता है। वे अधिकार ही उचित हो सकते हैं जो 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख' के लक्ष्य को प्राप्त कराने में सहायक हों। बेन्थम ने कहा है – "अधिकार मानव जीवन के सुखमय जीवन के वे नियम हैं जिन्हें राज्य के कानून मान्यता प्रदान करते हैं।"

अतः अधिकार प्रकृति–प्रदत्त न होकर समाज –प्रदत्त होते हैं। वे मनुष्य के सुख के लिए हैं जिन्हें राज्य मान्यता देता है और उनके अनुसार अपनी नीति बनाता है। राज्य ही अधिकारों का स्त्रोत है। नागरिक प्राकृतिक अधिकारों के लिए राज्य के विरूद्ध किसी प्रकार का दावा नहीं कर सकते, क्योंकि अधिकारों के साथ कुछ कर्त्तव्य भी बँधे हैं जिनके अभाव में अधिकार निष्प्राण व निरर्थक हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बेन्थम ने प्राकृतिक अधिकारों की धारणा को कोरी मूर्खता बताया है। उसके अनुसार अधिकार कानून की देन है और अच्छे

कानून की परख 'अधिकतम लोगों की अधिकतम सुख' प्रदान करने के लक्ष्य को प्राप्त करने पर ही हो सकती है। इस तरह बेन्थम ने प्राकृतिक अधिकारों की धारणा का खण्डन करते हुए उन्हें काल्पनिक कहा है।

5. **कानून सम्बन्धी विचार (Views on Law)** : बेन्थम का विचार है कि मनुष्य एक स्वार्थी प्राणी होने के नाते सदैव अपने सुख की प्राप्ति में लगा रहने के कारण दूसरों के हितों के रास्ते में बाधा उत्पन्न कर सकता है। ऐसी स्थिति से निपटने के लिए कुछ बन्धनों का होना जरूरी है। इसलिए राज्य के पास कानून की शक्ति हेाती है जो परस्पर विरोधी हितों से उत्पन्न संघर्ष से अधिक कारगर ढंग से निपटने से सक्षम होती है। बेन्थम का मत है – "विभिन्न अनुशस्तियों (Sanctions) के द्वारा व्यक्ति के हित और समुदाय के हितों के मध्य तालमेल बैठाया जाना चाहिए।" बेन्थम का मानना है कि इन अनुशस्तियों में सबसे अधिक कारगर अनुशस्ति कानून की होती है। राज्य मूलतः कानून का निर्माण करने वाला संगठन है और यह अपने व्यक्तियों पर कानून के द्वारा ही नियन्त्रण रखता है।

बेन्थम के मतानुसार – "कानून सम्प्रभु का आदेश है। कानून सम्प्रभुता की इच्छा का प्रकटीकरण है। समाज के व्यक्ति स्वाभाविक रूप से कानून की आज्ञा का पालन करते हैं। कानून न तो विवेक का और न ही किसी अलौकिक शक्ति की आज्ञा है। सामान्य रूप से यह उस सत्ता का आदेश है, जिसका पालन समाज के व्यक्ति अपनी आदत के कारण करते है।" कानून व्यक्ति की मनमानी पर अंकुश है। यह व्यक्ति व समुदाय के हितों में तालमेल बैठाने का साधन हैं जो अपना कार्य दण्ड व पुरस्कार के माध्यम से करता है। कानून का सम्बन्ध व्यक्ति के समस्त कार्यों से न होकर केवल उन्हीं कार्यों का नियमन करने से है जो व्यक्ति के अधिकतम सुख के लक्ष्य को प्राप्त कराने के लिए आवश्यक है।

बेन्थम का मानना है कि कानून इच्छा की अभिव्यक्ति है। ईश्वर और मनुष्य के पास तो इच्छा होती है लेकिन प्रकृति के पास कोई इच्छा नहीं होती।

इसलिए दैवी कानून और मानवीय कानून तो हो सकते हैं, लेकिन प्राकृतिक कानून नहीं हो सकते। दैवी कानून भी अनिश्चित होता है। अतः मानवीय कानून ही सर्वोच्च कानून होता है जो समाज व व्यक्ति के सम्बन्धों का सही दिशा निर्देशन व नियमन कर पाने में सक्षम होता है।

कानून का उद्देश्य : बेन्थम का मानान है कि कानून का उद्देश्य भी सामाजिक उपयोगिता है। कानून व्यक्ति के आचरण को अनुशासित करता है जिससे समाज में 'अधिकतम व्यक्तियों के अधितमक सुख' में वृद्धि होती है। बेन्थम के अनुसार कानून के चार उद्देश्य हैं – सुरक्षा, आजीविका, सम्पन्नता तथा समानता। बेन्थम का कहना है कि सार्वजनिक आज्ञा पालन ही कानून को स्थायित्व प्रदान करके उसे प्रभावी बनाता है और उसे अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख को प्राप्त करने में योगदान देता है। इसलिए कानून की भाषा स्पष्ट व सरल होनी चाहिए ताकि साधारण व्यक्ति भी उसका ज्ञान प्राप्त कर सके।

कानून के प्रकार : बेन्थम के कानून का वर्गीकरण करते हुए उसे चार भागों में बाँटा है :

(i) नागरिक कानून (Civil Law)

(ii) फौजदारी कानून (Criminal Law)

(iii) संवैधानिक कानून (Constitutioinal Law)

(iv) अन्तरराष्ट्रीय कानून (International Law)

इस प्रकार बेन्थम ने कानून को सम्प्रभु का आदेश मानते हुए उसे व्यक्तियों के अधिकतम सुख प्राप्त करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना है। उसने मानवीय कानून को सर्वोच्च कानून माना है। अपने अन्य सभी सिद्धान्तों की तरह बेन्थम ने कानून को भी उपयोगिता आधार प्रदान किया है।

6. **न्याय सम्बन्धी विचार (Views on Justice) :** अपने अन्य विचारों की ही तरह बेन्थम ने न्याय को भी उपयोगिता के आधार पर परिभाषित किया है। बेन्थम

का कहना है कि कानून पर आधारित होने के कारण न्याय का परिणाम उपयोगिता होना चाहिए। बेन्थम ने अपने न्याय सम्बन्धी विचारों में तत्कालीन इंग्लैण्ड की न्याय व्यवस्था की कटु आलोचनाएँ की हैं। उसने कहा है कि मुकद्दमें में वादी और प्रतिवादी दोनों पक्षों के लिए न्याय प्राप्ति के मार्ग में दुर्गम बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। उन्हें न्याय प्राप्त करने के लिए भारी फीसें वकीलों को देनी पड़ती है। साथ में ही समय अधिक लगता है। न्याय प्राप्त करने के लिए न्यायपालिका के कर्मचारियों को कदम कदम पर सुविधा शुल्क देने पड़ते हैं। इसलिए बेन्थम के तत्कालीन न्याय – व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए लिखा है –"इस देश में न्याय बेचा जाता है, बहुत महंगा बेचा जाता है और जो व्यक्ति इसके विक्रय मूल्य को नहीं चुका सकता है, न्याय पाने से वंचित रह जाता है।" बेन्थम न्यायधीशों को एक कम्पनी की संज्ञा देता है। यह कम्पनी अपने लाभ के लिए उन कानूनों का सहारा लेती है जिन्हें अपने लाभ के लिए न्यायधीशों ने बनाया है।

इस प्रकार बेन्थम ने तत्कालीन न्याय–व्यवस्था के दोषों पर भली – भान्ति विचार करके उन्हें अपने दर्शन में प्रस्तुत किया है। उसके न्याय – सम्बन्धी विचार आज भी प्रासंगिक है। जैसे दोष उसने उस समय बताए थे, वे आज भी विद्यमान हैं।

3.8 बेन्थम : एक सुधारक के रूप में (Bentham As a Reformer)

अनेक लेखकों ने बेन्थम को एक राजनीतिक दार्शनिक की बजाए एक महान् सुधारवादी विचारक माना है। उसने तत्कालीन इंग्लैण्ड की न्याय – व्यवस्था, जेलखानों, विधि, शासन – प्रणाली, शिक्षा – पद्धति, धार्मिक व्यवस्था आदि में जो सुधार किए, उन पर ही आगामी सुधारों की प्रक्रिया आश्रित हो गई। उनके सुधारवादी विचारों के सुझावों से ही सारे संसार में सुधारों की लहर चल पड़ी। सेबाइन ने कहा है – "सामाजिक दर्शन के इतिहास में ऐसे विचारक कम ही हुए हैं, जिन्होंनें इतना व्यापक और इतना उपयोगी प्रभाव डाला हो, जितना बेन्थम ने।" इसी तरह मैक्सी ने कहा है – "यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जिन सुधारों का बेन्थम में इतनी तत्परता और लाभ के साथ समर्थन किया था, उनमें से अनेक

सुधार आज विभिन्न देशों की विधि का रूप पा चुके हैं।" बेन्थम के प्रमुख सुधारवादी विचार निम्नलिखित हैं :–

1. **न्याय व्यवस्था में सुधार (Reformsin Judicial System) :** बेन्थम ने तत्कालीन इंगलैण्ड की न्याय – व्यवस्था को दोषपूर्ण मानते हुए उसमें वांछित सुधारों का सुझाव दिया है। उसने मंहगी व जटिल न्याय–व्यवस्था की कटु आलोचना की है। उसने तत्कालीन इंगलैण्ड की अदालतों की कार्य – विधि को आसान बनाने व उसकी कार्यक्षमता बढ़ाने के सुझाव दिए हैं। उसके प्रमुख सुझाव निम्नलिखित हैं –

   (i) किसी मुकद्दमें का निर्णय एक ही न्यायधीश के द्वारा ही होना चाहिए, तीन या चार न्यायधीशों द्वारा नहीं। उसका मत है कि अधिक संख्या से उत्तरदायित्व में कमी आती है। पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना केवल एक न्यायधीश में ही हो सकती है। अनेक न्यायधीशों में परस्पर मतभेद की सम्भावना होने के कारण न्याय निरपेक्ष नहीं रह जाता है। अतः पूर्ण न्याय की प्राप्ति क लिए न्यायधीशों की संख्या सीमित होनी चाहिए।

   (ii) प्रत्येक व्यक्ति को अपना वकील स्वयं बनना चाहिए ताकि वह मध्यस्थ की औपचारिक कार्यवाही ही बच सके।

   (iii) न्याय–व्यवस्था में दक्षता, निपुणता और निष्पक्षता लाने के लिए यह आवश्यक है कि न्यायधीशों की नियुक्ति योग्यता, गुण और प्रशिक्षण के आधार पर होनी चाहिए, वंश या कुल के आधार पर नहीं। इससे न्याय – व्यवस्था में अज्ञान व पक्षपात को बढ़ावा मिलता है।

   (iv) मुकद्दमे का निर्णय कठोर नियमों के अनुसार न करके न्यायिक विवेक के अनुसार किया जाना चाहिए।

   (v) न्याय – व्यवस्था सस्ती होनी चाहिए।

   (vi) न्याय शीघ्र मिलना चाहिए।

   (vii) न्यायिक प्रक्रिया में ज्यूरी पद्धति का प्रयोग करना चाहिए ताकि न्यायधीशों की निरंकुशता को रोका जा सके।

(viii) न्याय – व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए कानूनों की भाषा सरल व स्पष्ट होनी चाहिए।

(ix) प्रत्येक न्यायालय का क्षेत्रधिकार अलग – अलग होना चाहिए ताकि अतिक्रमण को रोका जा सके।

(x) जनमत की अभिव्यक्ति के लिए न्याय– व्यवस्था में प्रेक्षक नियुक्त किए जाने चाहिएं।

2. **जेल – व्यवस्था में सुधार (Reforms in Prison System)** : बेन्थम के समय में जेलों में कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। उन्हें अन्धेरी कोठरियों व तहखानों में रखा जाता था। उन्हें गन्दा भोजन दिया जाता था। बालक और वयस्क अपराधियों को एक साथ रखा जाता था। जेल अपराधियों व अपराधों का अखाड़ा मात्र थे। जेल में जाने के बाद वहाँ से बाहर आने वाला प्रत्येक अपराधी भयानक व कुख्यात अपराधी की संज्ञा प्राप्त कर लेता था। इस व्यवस्था से दुःखी होकर बेन्थम में इंगलैण्ड की जेल व्यवस्था में निम्न सुधारों का सुझाव दिया :–

(i) जेल में ही अपराधियों को औद्योगिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए ताकि वे बाहर आकर समाज की आमधारा से जुड़ जाएँ।

(ii) उसने 'गोलाकार कारावास' (Panopticon) के निर्माण का सुझाव दिया ताकि उसमें रहकर कैदी ईमानदार और परिश्रमी बन सकें। उसने इस योजना के तहत अर्ध–चन्द्राकार इमारतें बनाने का सुझाव दिया ताकि जेल की अधिकारी अपने निवास स्थान से इन इमारतों पर नजर रख सके।

(iii) अपराधियों को आत्मिक उत्थान हेतु नैतिक व धार्मिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए ताकि वे जेल से बाहर जाने पर अच्छे नागरिक साबित हों।

(iv) कारावास से मुक्त होने पर उनके लिए समय तक नौकरी देने की व्यवस्था की जाए जब तक वे समाज की अभिन्न धारा से न जुड़ जाएँ।

आगे चलकर जेलों में जो सुधार हुए उन पर बेन्थम का ही व्यापक प्रभाव पड़ा।

3. **दण्ड– व्यवस्था में सुधार (Reforms in Punishment) :** बेन्थम ने दण्ड–विधान के क्षेत्र में भी अपने उपयोगिता के सिद्धान्त को लागू करके उस समय में प्रचलित दण्ड–व्यवस्था के अनेक दोषों पर विचार किया है। उस समय छोटे – छोटे अपराधों के लिए अमानवीय व कठोर दण्ड दिया जाता था। बेन्थम ने महसूस किया कि छोटे से अपराध के लिए कठोर सजा देने से अपराधों में वृद्धि होती है। दण्ड का लक्ष्य समाज में अपराधों को रोकना होना चाहिए। इसलिए उसने दण्ड–व्यवस्था में कुछ सुधारों के उपाय सुझाए हैं।

(i) दण्ड – व्यवस्था भाव से देना चाहिए ताकि अपराधी को अनावश्यक पीड़ा उत्पन्न न हो। अर्थात् समान अपराध के लिए समान दण्ड का प्रावधान होना चाहिए।

(ii) अपराधी को दण्ड अवश्य मिलना चाहिए। उसका मानना था कि दण्ड की निश्चितता अपराधों को रोकती है।

(iii) दण्ड़ की पीड़ा अपराध की बुराई से थोड़ी ही अधिक होनी चाहिए ताकि अपराध की पुनारावृत्ति न हो।

(iv) अपराधों का वर्गीकरण किया जाना चाहिए।

(v) दण्ड का उद्देश्य अपराधी को सुधारना होना चाहिए।

(vi) दण्ड का स्वरूप अपराधी की आयु व लिंग के आधार पर निर्धारित होना चाहिए।

(vii) दण्ड देने से पहले अपराधी की मानसिक स्थिति व अपराध के कारणों पर अच्छी तरह विचार करना चाहिए।

(viii) कानून द्वारा दण्ड को कम करने या क्षमा करने की व्यवस्था नहीं होनी चाहिए।

इस प्रकार बेन्थम ने अपने दण्ड विधान में सुधारों को प्रतिरोध सिद्धान्त (Deterrent Theory) तथा सुधारात्मक सिद्धान्त (Reformative Theory) के मिश्रण से तैयार किया है। उसके द्वारा सुझाए गए उपाय आज भी प्रासंगिक हैं। उसके सुझावों को आगे चलकर अनेक देशों ने स्वीकार किया है।

4. **कानून – व्यवस्था में सुधार (Reforms in Law) :** बेन्थम ने अपने समय के कानून को अव्यावहारिक व अनुपयोगी मानते हुए उसकी आलोचना की है। उसने महसूस किया कि सभी कानून गरीबों को दबाने वाले हैं और अमीरों का पोषण करने वाले हैं। उसने तत्कालीन कानून – व्यवस्था में निम्न सुधारों के सुझाव दिए :–

(i) कानूनों का संहिताकरण किया जाना चाहिए ताकि उनके मध्य क्रमबद्धता कायम की जा सके। इसके लिए कानूनों को विभिन्न श्रेणियों व वर्गों में बाँटा जाना चाहिए।

(ii) सरकार को कानून की अनभिज्ञता को दूर करने के लिए अपने नागरिकों को अनिवार्य शिक्षा के माध्यम से प्रशिक्षित करना चाहिए। इसके लिए सरकार को सस्ते मूल्यों पर पुस्तकें जनता तक पहुँचानी चाहिए।

(iii) कानून की भाषा सरल व स्पष्ट होनी चाहिए ताकि आम व्यक्ति भी उसको समझ सके। कानून में प्रयुक्त होने वाले कठिन शब्दों का सरलीकरण किया जाना चाहिए।

(iv) कानून जनता के हित को ध्यान में रखकर ही बनाए जाने चाहिएं।

इस प्रकार बेन्थम ने कानुन को ऐसा बनने का सुझाव दिया जिससे व्यक्तियों के सुखों में वृद्धि हो।

5. **शासन व्यवस्था में सुधार :** बेन्थम ने सरकार या शासन का उद्देश्य अधिकतम लोगों के लिए अधिकतम सुख को प्रदान करना माना है। उसने सभी शासन – प्रणालियों में गणतन्त्रीय शासन – प्रणाली का ही समर्थन किया है। लेकिन उसने तत्कालीन ब्रिटिश–पद्धति को अपूर्ण मानकर उसमें कुछ सुधारों की योजना प्रस्तुत की है।

(i) उसने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का समर्थन किया है। उसने इसके लिए थोड़ा – बहुत पढ़ा – लिखा होना भी आवश्यक बताया है। उस समय संसद का सदस्य चुनने का अधिकार कम ही व्यक्तियों को प्राप्त था।

(ii) उसने संसद के चुनाव प्रतिवर्ष समय पर कराने का सुझाव दिया है। इससे सदस्य क्रियाशील होंगे व निर्वाचकों को उनकी योग्यता परखने का अवसर प्राप्त होगा।

(iii) उसने गुप्त मतदान प्रणाली का समर्थन किया है। इससे निष्पक्ष चुनावों को बढ़ावा मिलेगा।

(iv) उसने संसद के ऊपरी सदन को समाप्त करने का भी सुझाव दिया है ताकि इसके अनावश्यक हस्तक्षेप का निम्न सदन पर दुष्प्रभाव न पड़ सके।

उसने राजतन्त्र को समाप्त करके गणतन्त्रीय शासन प्रणाली अपनाने का सुझाव दिया है। उसका सोचना है कि गणतन्त्रीय शासन – प्रणाली ही लोकहित में कार्य करेगी। इससे जनता की स्वतन्त्रता सुरक्षित रहेगी। उसका गणतनत्रीय व्यवस्था का समर्थन करना राजतन्त्र की आलोचना को दर्शाता है। उसके सुझावों को आज अनेक लोकतन्त्रीय देशों में अपनाया जा चुका है। आज इंगलैण्ड में ऊपरी सदन का महत्त्व गौण हो चुका है। इससे बेन्थम की राजनीतिक दूरदर्शिता का पता चलता है।

6. **शिक्षा में सुधार (Reforms in Education)** : बेन्थम ने मनुष्य जाति के उत्थान के लिए शिक्षा को आवश्यक माना है। उसका मानना है कि शिक्षा व्यक्ति की कार्यक्षमता में वृद्धि करती है और आनन्द में भी वृद्धि करती है। इसलिए उसने तत्कालीन शिक्षा योजना को समाज के लिए अनुपयोगी बतलाया। उसने कहा कि यह शिक्षा – पद्धति अमीरों को एकाधिकार के रूप में उनके हितों का ही पोषण करती है। अतः इसे जनतान्त्रिक बनाने के लिए इसमें कुछ परिवर्तन करने जरूरी हैं। उसने शिक्षा में निम्न सुधार किए :–

(i) उसने मतदान के लिए पढ़ने की योग्यता को आवश्यक माना।

(ii) उसे जेल में रहने वाले अपराधियों की औद्योगिक व नैतिक शिक्षा पर जोर दिया।

(iii) उसने निर्धन वर्ग के छात्रों के लिए विशेष रूप से शिक्षा पर बल दिया। इसके लिए उसने अपने शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव में दो प्रकार की शिक्षा

– व्यवस्थाओं का सुझाव दिया। एक निर्धन वर्ग के लिए तथा दूसरी मध्यम तथा समृद्ध वर्ग के बच्चों के लिए।

(iv) उसने शिक्षा में बौद्धिक विकास के विषयों के अध्ययन पर बल दिया।

(v) अपने छात्रों के लिए जीवन में उपयोगी तथा लाभदायक विषयों के अध्ययन पर जोर दिया।

(vi) उसने छात्रों की नैसर्गिक क्षमता या स्वाभाविक रूचि के अनुसार ही शिक्षा प्रदान करने का समर्थन किया।

(vii) उसने उच्च वर्ग के लिए अलग शिक्षा पद्धति का सुझाव दिया। इसे 'Monitorial System' कहा जाता है।

बेन्थम के समय में सार्वजनिक शिक्षा के प्रति कोई रूचि नहीं थी। सत्तारूढ़ वर्ग को भय था कि यदि गरीब वर्ग शिक्षित हो गया तो वह उनकी सत्ता को चुनौती देकर उखाड़ फेंकेगा। इससे सरकारी खर्च में भी वृद्धि होगी। इसके बावजूद भी बेन्थम ने शिक्षा सुधारों की योजना प्रस्तुत की जो आगे चलकर इंगलैण्ड की शिक्षा योजना का आधार बनी। अमेरिका, कनाडा तथा अन्य प्रगतिशील देशों ने भी बेन्थम के ही सुझावों को स्वीकार करके उसके महत्त्व को बढ़ाया है। अतः आधुनिक समय में शिक्षा – प्रणाली बेन्थम की बहुत ऋणी है। बेन्थम के शाश्वत महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता।

7. **अन्य सुधार (Other Reforms) :** बेन्थम ने उपर्युक्त सुधारों के अतिरिक्त भी सुधार प्रस्तुत किए हैं। उसने अहस्तक्षेप की नीति का समर्थन किया है। उसने उपनिवेशों को आर्थिक हित के लाभदायक नहीं माना है। उसने स्वतन्त्र व्यापार नीति का समर्थन किया है। उसने धर्म के क्षेत्र में चर्च की कटु आलोचना की है। वह चर्च को एक ऐसी संस्था बनाने का सुझाव देता है जो मुनष्य मात्र का हित पूरा करने में सक्षम हो। उसने गरीबों की भलाई के लिए बनाने का सुझाव देता है। उसने स्वास्थ्य सेवाओं के बारे में भी अपनी योजनाएँ प्रस्तुत की है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है। जिस पर बेन्थम ने अपनी सुधारवादी विचार प्रस्तुत न

किए हों। अतः बेन्थम को राजनीतिक दार्शनिक की अपेक्षा एक सुधारवादी विचारक मानना सर्वथा सही है।

3.9 बेन्थम का योगदान (Contribution of Bentham)

अनेक अन्तर्विरोधों व भ्रान्तियों के बावजूद बेन्थम राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में एक श्रेष्ठ विचारक के रूप में गिना जाता है। उसने उन्नीसवीं शताब्दी के घटनाचक्र को इंगलैण्ड तथा अन्य देशों में सुधारने के रूप में इतना अत्याधिक प्रभावित किया, उतना अन्य किसी विचारक ने नहीं किया। उसके सुधारों सम्बन्धी सुझाव सम्पूर्ण संसार के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं उसकी रचनाओं का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद किया गया और उसने रूस, स्पेन, पुर्तगाल व दक्षिणी अमेरिका की राजनीतिक विचारधारा को प्रभावित किया। उसका राजनीतिक चिन्तन के विकास में निम्नलिखित योगदान हैं :–

1. **राज्य व सरकार का कल्याणकारी लक्ष्य :** बेन्थम ने राज्य व सरकार का लक्ष्य अधिकतम लोगों को अधिकतम सुख प्रदान करना बताया है। बेन्थम ने कहा कि राज्य मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य राज्य के लिए है। उसने कहा कि वही राज्य उत्तम हो सकता है जो अपने प्रजाजनों का अधिकतम हित चाहता हो। उसने राज्य व सरकार की सफलता की कसौटी व्यक्तियों को अधिक से अधिक सुख प्रदान करने को माना है। बेन्थम ने राज्य व सरकार को कल्याणकारी संस्थाएँ माना है। उसका कहना है कि राज्य व सरकार की उत्पत्ति मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ही होती है और इनका अस्तित्व इन आवश्यकताओं की पूर्ति पर ही निर्भर है। इसलिए उसने राज्य व सरकार को जनता की भलाई के लिए अधिकतम प्रयास कर अपने अस्तित्व को न्यायसंगत सिद्ध करने के लिए कहा है। उसका 'अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख' का लक्ष्य आधुनिक राज्यों व सरकारों का भी लक्ष्य है। अतः यह बेन्थम की शाश्वत देन है।
2. **न्याय व्यवस्था में सुधार :** बेन्थम ने ब्रिटिश न्याय प्रणाली की कटु आलोचना करते हुए न्यायिक सुधार के सुझाव दिए है। उसने कहा है कि न्याय अमीरों

को ही मिलता है, गरीबों को नहीं। उसने गरीबों के लिए 'Poor Law' बनाने का सुझाव दिया। उसने न्यायिक कार्यवाहियों को सरल व सत्ता बनाने का जो सुझाव दिया, वह आज भी अनेक देशों की न्यायिक व्यवस्थाओं में अपनाया गया है। इंगलैण्ड की सरकार ने भी बेन्थम के सुझावों पर ही अपनी न्याय–प्रणाली का विकास किया है।

3. **कानूनों का सुधार :** बेन्थम ने कानून के क्षेत्र में अविलम्ब तथा स्थायी प्रभाव डाला है। उसने कानून में सरलता, स्पष्टता व व्यावहारिकता लाने का जो सुझाव दिया था, वह ब्रिटिश सरकार द्वारा बाद में अपनाया गया। उसने कानूनों को नागरिक, फौजदारी तथा अन्तरराष्ट्रीय कानून के रूप में बाँटकर कानूनशास्त्र को एक नई दिशा दी। अमेरिका, रूस तथा अन्य देशों ने उसके संहिताकरण के आधार पर ही अपनी कानून व्यवस्था को ढालने का प्रयास किया है। उसके प्रयत्न से ही कानून के मौलिक सिद्धान्तों के चिन्तन में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। भारत में भी उसके सुधारों का व्यापक प्रभाव पड़ा है।

4. **दण्ड व्यवस्था में परिवर्तन :** बेन्थम ने दण्ड व्यवस्था में सुधार के अनेक उपायों को प्रस्तुत किया है। उसने जेलों में सुधार के अनेक उपायों का प्रस्तुत किया। उसने जेलों में सुधार की जो योजना सुझाई थी, वह आज भी अनेक देशों में व्यावहारिक रूप ले चुकी है।

5. **समानता का विचार :** बेन्थम ने कहा है कि "एक व्यक्ति को एक की गिनना चाहिए"। इस विचार से समानता के सिद्धान्त को जन्म होता है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे अमीर हो या गरीब, कानून की दृष्टि में समान है। उसका समानता का विचार प्रतिनिधि लोकतन्त्र का आधार है।

6. **लोकतन्त्र का संस्थापक :** बेन्थम ने गुप्त मतदान, प्रेस की आजादी, वयस्क मताधिकार, धर्मनिरपेक्षता आदि विचारों का समर्थन करके लोकतन्त्र को सुदृढ़ आधार प्रदान किया है। आधुनिक युग में भी सभी प्रजातान्त्रिक देशों में इनका वही महत्त्व है जो बेन्थम ने सुझाया था। अतः बेन्थम लोकतन्त्र के संस्थापक हैं।

7. **अनुसंधान व गवेषणा की प्रवृति को प्रोत्साहन :** बेन्थम ने ही सर्वप्रथम इस बात पर बल दिया कि राज्य की निति सोच – विचार करके ही निश्चित की जानी चाहिए। उसने ही गवेषणात्मक पद्धति को सर्वप्रथम राजनीतिशास्त्र में लागू किया। उसने दर्शनशास्त्र के अनुभववाद तथा आलोचनात्मक पद्धति को राजनीति, शासन और कानून के क्षेत्र में लागू करने का प्रयास किया। उसने कहा कि राज्य के सिद्धान्त, परम्परा व कल्पनावादी अन्तःकरण पर आधारित नहीं हो सकते। ये अनुसन्धान व प्रमाण पर ही आधारित होने चाहिए। इसी धारणा को आगे चलकर अनेक राजनीतिशास्त्र के विचारकों ने अपनाया है। इसलिए यह उसकी एक महत्त्वपूर्ण देन है।

8. **उपयोगितावादी सिद्धान्त को दार्शनिक आधार प्रदान किया :** बेन्थम ने सर्वप्रथम दार्शनिक सम्प्रदाय की स्थापना करके उसे वैज्ञानिक रूप देने का प्रयास किया है। यद्यपि उसने अपने उपयोगितावाद के मूल सिद्धान्त प्रीस्टले व हचेसन जैसे विद्वानों से ग्रहण किए हैं लेकिन इनको व्यवस्थित रूप प्रदान करने का श्रेय बेन्थम को ही जाता है।

9. **मध्यकालीन राजनीतिक विचारों का खण्डन :** बेन्थम ने सामाजिक समझौता सिद्धान्त का खण्डन किया और कहा कि राज्य किसी काल्पनिक समझौते का परिणाम नहीं है। उसने प्रजाजनों द्वारा स्वाभाविक रूप से आज्ञापालन को राज्य का आधार बताया है। उसने कहा कि मनुष्य राज्य की आज्ञा का पालन अपने लाभ के लिए करते हैं। इसी तरह उसने मध्ययुग में प्रचलित राज्य की उत्पत्ति के दैवी सिद्धान्त का भी खण्डन किया है। उसने अपने अनुभववाद पर आधारित विचारों द्वारा मध्ययुगीन अन्धकार व रहस्यवाद के जाल में फँसी राजनीतिक व्यवस्था को नई आशा की किरण दिखाई। विचारों द्वारा मध्ययुगीन अन्धकार व रहस्यवाद के जाल में फँसी राजनीतिक व्यवस्था को नई आशा की किरण दिखाई।

10. **राजनीतिक स्थिरता का सिद्धान्त :** बेन्थम ने तीव्र परिवर्तनों की अपेक्षा धीरे – धीरे होने वाले सुधारों से ब्रिटिश प्रणाली में स्थिरता का गुण पैदा करने के सुझाव दिए। उसने सुधारों को क्रान्तियों की तुलना में अधिक वांछनीय

और स्पृहणीय बताया। उसके सुझावों को ब्रिटिश सरकार द्वारा बाद में मान लिया गया। इससे ब्रिटिश राजनीति में स्थिरता के युग का सूत्रपात हुआ।

11. **व्यक्तिवाद का आरक्षक :** बेन्थम ने व्यक्ति को राज्य के सर्वसत्ताकारवादी पाश से मुक्त कराने का प्रयास किया है। उसने स्पष्ट कहा है कि राज्य व्यक्ति के लिए है, न कि व्यक्ति राज्य के लिए। उसने राज्य को मनुष्यों की उपयोगिता की कसौटी पर परखने का सुझाव देकर व्यक्तिवाद की आधारशिला मजबूत की हैं आधुनिक युग में अनेक सरकारें व्यक्ति की उपयोगितावाद धारणा के आधार पर ही कार्य कर रही हैं। व्यक्ति आधुनिक युग में राज्य के प्रत्येक कार्य का केन्द्र– बिन्दु है।

12. बेन्थम ने अप्रत्यक्ष रूप से समाजवाद के विकास में भी योगदान दिया है। उसने स्वतन्त्र व्यापार तथा अहस्तक्षेप के सिद्धान्त का समर्थन करके समाजवाद का ही पोषण किया है।

3.10 निष्कर्ष (Conclusion)–

राजनीतिक दर्शन के इतिहास में बैंथम का विशिष्ट स्थान है। उसके दर्शन की मौलिकता के बारे में संदेह किया जा सकता है, किन्तु इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि उसने अपने उपयोगितावाद सिद्धान्त एवं सुधारवादी योजनाओं के माध्यम से अपने युग की राजनीति को एक नई दिशा प्रदान की। उपयोगितावाद सिद्धान्त के मात्र दर्शन के क्षेत्र से बाहर निकलकर उसे व्यवस्थित रूप देने का तथा राजनीतिक क्षेत्र में लागू करने का श्रेय बैंथम को ही है। सी.एल. वेपर के अनुसार, ''उपयोगितावाद का जन्मदाता डेविड हयूम था। प्रीस्टले, हथेसन तथा पेले ने उसकी व्याख्या की और हेल्वेतियस तथा बेकरिया के विचारों ने उसका पोषण किया, लेकिन यह केवल बैंथम ही था जिसने उपयोगितावाद सिद्धान्त को परिष्कृत किया तथा जिसके विचारों को लेकर एक संस्था का निर्माण किया गया। इसके अतिरिक्त बैंथम ने शासन व्यवस्था में जिन सुधारों की बात कही उनमें से अधिकांश सुधारों की आज भी बहुत सी शासन प्रणालियों में आवश्यकता है। जैसे कानूनों का संहिताकरण, प्रतिनिधियों को वापिस बुलाने का अधिकार, न्यायिक प्रक्रिया को सस्ता

व सरल बनाना, न्याय की गरीबों तक पहुंच, शिक्षा व्यवस्था में सुधार, जेल तथा जेलों के प्रशासन में मानवीय सुधार, कैदियों के अधिकार आदि। इसके साथ–साथ प्रैस की स्वतंत्रता, गुप्त मतदान, व्यस्क मताधिकार, धार्मिक सहिष्णुता, धर्म की स्वतन्त्रता आदि का समर्थन करते हुए लोकतन्त्र को भी बल प्रदान किया।

3.11 शब्दावली (Keywords)–

संहिताकरण – लिपिबद्ध

संकलन – इकट्ठा करना

विधिशास्त्री – कानून का ज्ञाता

पैगम्बर – अग्रदूत

प्रत्यावर्तन – वापिस बुलाना

3.12 स्व–मूल्यांकन (Keywords)–

(1) बैंथम के चिन्तन पर प्रभाव डालने वाले कारकों का वर्णन करें।

(2) सुखवाद का सिद्धान्त क्या है

(3) बैंथम ने शिक्षा व्यवस्था में किन सुधारों का उल्लेख किया है?

(4) न्याय प्रणाली में सुधार के लिए बैंथम द्वारा दिए गए सुझावों का वर्णन करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) बैंथम के उपयोगितावाद के सिद्धान्त का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें।

(2) ''एक महान समाज सुधारक'' के रूप में बैंथम का समीक्षात्मक मूल्यांकन कीजिए।

(3) राजनीतिक दर्शन के इतिहास में बैंथम का क्या योगदान है? व्याख्या करें।

3.13सन्दर्भ सूची–

1. प्रभुदत्त शर्मा, राजनीतिक विचारों का इतिहास (प्लेटो से मार्क्स), कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1967.
2. बी.एल.फाड़िया, पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास (प्लेटो से मार्क्स), साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2018.
3. जे.पी.सूद, पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का इतिहास (भाग–प्राचीन व मध्यकालीन), जे.नाथ एण्ड कंपनी, मेरठ, 2008.
4. सेबाइन, ए हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थ्योरी, न्यूयार्क, 1973
5. पुखराज जैन, राजनीतिक विज्ञान के सिद्धान्त, साहित्य भवन, आगरा, 1988.
6. रघुवीर सिंह, मध्यकालीन विश्व का इतिहास, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली
7. ब्रायन आर. नेल्सन, वेस्टर्न पॉलिटिकल थॉट, वेवलैंड प्रकाशन, 1996.
8. डी. बॉशर व पी. कैली, पॉलिटिकल थिंकरसः फ्रॉम सॉकरेटिज टू द प्रेजेंट, ऑक्सफोर्ड, 2009.
9. जे.कॉलमैन, ए हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थॉटः फ्रॉम एंशियट ग्रीस टू अर्ली प्रिस्टियनीटी, ऑक्सफोर्ड, 2000.
10. सी.बी.मैकफर्सन, द पॉलिटिकल थ्योरी ऑफ पसैसिव इंडिवियुलिज्मः हॉब्स टू लॉक, 1962.
11. ली. स्ट्रॉस, हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल फिलॉस्फी, शिकागो यूनिवर्सिटी प्रैस, 1987.

अध्याय – 4

जॉन स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill)

4.1 प्रस्तावना (Introduction).

जॉन स्टुअर्ट मिल उपयोगितावाद का अंतिम समर्थक तथा व्यक्तिवाद के अग्रणी विचारकों में से एक थे। उसने उपयोगितावादी दर्शन से एक नयी दिशा प्रदान की। उसने बैंथम के उपयोगितावाद को भौतिकवाद से निकालकर नैतिक स्वरूप प्रदान किया। उसके अनुसार व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य केवल सुखों के पीछे ही भागना नहीं है बल्कि नैतिकता, स्वतन्त्रता और समाजिकता का व्यक्ति के जीवन में भौतिक सुखों से ज्यादा महत्वपूर्ण स्थान हैं। जीवन की आरंभिक अवस्था में आर्थिक मामलों में आंशिक अनुदार दृष्टि अपनाते हुए भी मिल अपने विचारों में परिपक्वता आने के साथ–साथ समाजवाद की तरफ मुड़ने लगा। विचार तथा अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता उसने जो गौरवपूर्ण समर्थन किया है, वह उसे राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाता है। उसकी पुस्तक 'आन लिबर्टी' ने उसे विश्व के स्वतन्त्रता समर्थक करोड़ों लोगों के हृदय का सम्राट बना दिया। वेबर के अनुसार '' विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर लिखे गए इस अद्वितीय तथा ओजस्वी निबन्ध ने मिल के दुनिया के लोकतन्त्र समर्थकों के बीच सम्मानीय स्थान प्रदान कर दिया है।'' एक और कुछ लोगों के द्वारा मिल के प्रतिक्रियावादी, बुर्जुआ तथा लंगडा समाजवादी कहकर उसकी भर्त्सना भी की गयी है। वहीं दूसरी ओर उसे एक महान दार्शनिक, स्वतन्त्रता के पुजारी, व्यक्तिवादी चिंतन का सिरमौर, महान् न्यायविद एवं अर्थशास्त्री कहकर पुकारा गया है।

4.2 उद्देश्य (Objectives)–

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होगें–

- जे.एस. मिल के प्रारम्भिक जीवन को समझने
- जे.एस. मिल द्वारा बैंथम के उपयोगितावाद में किए गए संबोधनो को जानने
- मिल के स्वतन्त्रता पर दिए गए विचारों को समझने के।

4.3 जीवन परिचय (Life Sketch)

उपयोगितावद के अन्तिम प्रबल समर्थक प्रबल समर्थक जॉन स्टुअर्ट मिल का जन्म 20 मई, सन् 1806 ई० को लन्दन में हुआ। वह अपने पिता जेम्स मिल (1773–1836) की प्रथम सन्तान था। उसके पिता स्वयं उपयोगितावादी सुधारक होने के नाते उसे उपयोगितावादी शिक्षा देना चाहते थे। जॉन स्टुअर्ट मिल स्वयं भी एक प्रतिभाशाली बालक था। उसने मात्र 3 वर्ष की आयु में ही ग्रीक तथा 8 वर्ष की आयु में लैटिन भाषा सीख ली थी। उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर उसे पिता जेम्स मिल ने उसे अपने निर्देशन व अनुशासन में रखा। उसने अपने पिता के मार्ग – दर्शन में ही जेनोफोन, हेरोडोटस, आइसोक्रेटस, प्लेटो, होमर, थ्यूसीडाइटस, अरिस्टोफेन्स, डेमोन्सथेनीज, अरस्तू, एडम स्मिथ, रिकार्डो आदि के ग्रन्थों का गहन एवं तर्कपूर्ण अध्ययन किया। वह एक एकान्तप्रिय एवं अध्ययन प्रेमी विचारक था। वह किसी से मिलना नहीं चाहता था, इसलिए उसे मानसिक तनाव ने घेर लिया। इसलिए उसके पिता ने उसे 1820 में फ्रांस भेज दिया ताकि वह स्वास्थ्य लाभ पा सके। वहाँ उसने बेन्थम के छोटे भाई सैमुअल बेन्थम के पास रहकर प्राकृतिक सौन्दर्य का भरपुर आनन्द उठाया। इससे उसे मानसिक तनावों से मुक्ति मिली और वह वापिस आकर इंग्लैण्ड में रहकर अध्ययन में जुट गया।

वापिस लौटकर जॉन स्टुअर्ट मिल ने बेन्थम की पुस्तक 'कानून के सिद्धान्त' का अध्ययन किया। तत्पश्चात् उसने प्रसिद्ध विधि – वेता जॉन ऑस्टिन से कानून की शिक्षा प्राप्त की। वह मात्र 16 वर्ष की आयु में ही एक प्रौढ़ विद्वान् बन चुका था। 1823 में उसे ईस्ट इण्डिया कम्पनी में क्लर्क की नौकरी मिल गई और वह इस पद पर 1858 तक कार्यरत रहा। यहाँ रहकर उसे शासन सम्बन्धी समस्याओं का गहरा अनुभव प्राप्त हुआ। 1826 में उसके जीवन में कठोर बौद्धिक अनुशासन के कारण मानसिक संकट पैदा हो गया। इस दौरान उसने वड्र्सवर्थ एवं कॉलरिज की कविताएँ पढ़ी। इसके उसके स्वभाव व चिन्तन में एक क्रान्किारी परिवर्तन हुआ। अब उसके अन्दर एक नवीन मानव का जन्म हुआ। इसके बाद 1831 में उसका परिचय

श्रीमती हैरियट टेलर नामक सम्भ्रात महिला से हुआ। उसकी मित्रता ने उसके मानसिक तनाव को दूर कर दिया। दोनों की प्रगाढ़ मित्रता टेलर के पति की मृत्यु के पश्चात् 1851 में परिणय –सूत्र में बदल गई। इसके बाद दोनों ने पारस्परिक सहायोग से रचनाएँ लिखी। मिल ने स्वयं कहा है – "श्रीमती टेलर बुद्धि और प्रतिभा की साकार प्रतिमा थी।" उसने अपने जीवन के शेष वर्ष अपनी पत्नी की मृत्यु (1858 ई०) के बाद 'एविग्वान' नामक नगर में अपनी पत्नी की कब्र के पास बिताए। 1865 में वह वेस्टमिंस्टर निर्वाचन क्षेत्र से संसद सदस्य चुना गया। 1866 से 1868 तक भी वह संसद सदस्य रहा। इस दौरान उसने आयरलैण्ड में भूमि – सुधार, किसानों की स्थिति, महिला – मताधिकार, बौद्धिक कार्यकारियों की स्थिति, श्रमिक वर्ग के हितों आदि के बारे में अपने विचार व्यक्त किए। लेकिन वह जन – नायक नहीं बन सका। ग्लैडस्टन ने कहा है – "राजनीतिज्ञ के रूप में उसके असफल होने के कारण उसे आगे बढ़े हुए विचारों की अपेक्षा उसकी समझ – बूझ एवं व्यवहार की कमियाँ थी।" लेकिन इस कथन में पूर्ण सच्चाई नहीं है। मिल एक असाधारण, श्रेष्ठ एवं संत कोटि का विचारक था। उसमें बौद्धिक प्रतिभा, आन्दोलनकारी क्षमता, संवेदनशील हृदय, स्नेही प्रवृत्ति एवं स्वतन्त्रता के प्रति अथाह प्रेम का सुन्दर समन्वय था। स्वयं ग्लैडस्टन ने स्वीकार किया है – "जब जॉन बोलता था तो मुझे यह अनुभूति होती थी कि मैं एक सन्त की वाणी सुन रहा हूँ। 1873 में उसकी जीवन – लीला समाप्त हो गई और उसे उसकी पत्नी की कब्र में ही दफना दिया गया।

4.4 मिल पर प्रभाव (Influence on Mill)

जॉन स्टुअर्ट मिल को प्रभावित करने वाली दो प्रमुख घटनाएँ हैं : प्रथम उसके पिता का अनुशासन तथा दूसरी उसकी पत्नी टेलर का चरित्र। जॉन स्टुअर्ट का पिता एक कठोर अनुशासन वाला व्यक्ति था। अपने अध्ययन कार्य की अधिकता व कठोर नियमों में बँधा होने के कारण मिल को मानसिक अवसाद का सामना करना पड़र। उसे बेन्थम का सुखवाद निरर्थक प्रतीत हुआ। उसने कहा है – "मैं उन विचारों व परिवर्तनों को मूर्त रूप देने में लगा रहा, जिन्हें यदि क्रियात्मक रूप दे भी दिया

जाए तो मझे महान् आनन्द और सुख कभी प्राप्त नहीं हो सकता।" उसे अनुभव हुआ कि कोरा ज्ञान मानवीय भावनाओं व अनुभूतियों को सन्तुष्ट नहीं कर सकता। इसलिए उसने बेन्थस को उपयोगितावाद को निरर्थक मान लिया। इससे उसके चिन्तन में महान् क्रान्ति आई। उसने कॉलरिज तथा वड्र्सवर्थ की कविताओं की मदद से अपने को मानसिक अवसाद के सागर से बाहर निकाला। इससे उसके अन्दर मानव संवेदनाओं को समझने की महान् क्षमता पैदा हुई। उसने बेन्थम के उपयोगितावादी दर्शन में परिवर्तन करने शुरू कर दिए। उसने स्वयं कहा है– "मैं पीटर हूँ, जिसने अपना गुरू नकार दिया है।"

उसके चिन्तन को प्रभावित करने वाली दूसरी घटना उसकी श्रीमति टेलर के साथ प्रगाढ़ मित्रता थी। टेलर के पति की मृत्यु के बाद उसने उससे विवाह कर लिया। उसके बाद दोनों ने मिलकर रचनाएँ लिखी। उसने अपनी पत्नी टेलर के साथ मिलकर 'ऑन लिबर्टी' (On Liberty) नामक ग्रन्थ की रचना की। टेलर की व्यक्तित्व और कुशाग्र बुद्धि से प्रभावित होकर मिल ने 'दि सबजेक्शन ऑफ विमैन' (The Subjection of Women) नामक पुस्तक लिखी।

इस प्रकार बेन्थम के उपयोगितावाद अपने पिता जेम्स मिल द्वारा उपयोगितावाद के विकास का उस पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा। एडम स्थिम तथा रिकार्डो जैसे अर्थशास्त्रियों ने भी उसके चिन्तन को प्रभावित किया। उसकी पत्नी टेलर तथा कॉलरिज व वड्र्सवर्थ जैसे कवियों ने भी उसके मानस –पटल पर अमिट छाप छोड़ी।

महत्त्वपूर्ण रचनाएँ (Important Works)

जॉन स्टुअर्ट मिल एक तर्कशील व बुद्धिमान लेखक था। उसने अपनी प्रतिभा के 'राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, अध्ययनशास्त्र, आचारशास्त्र तथा न्यायशास्त्र आदि विषयों में जौहर दिखाए। उसकी रचनाओं पर उसके पिता जेम्स व बेन्थम का प्रभाव परिलक्षित होता है। उसकी रचनाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है :– (i) उसके जीवनकाल की रचनाएँ (ii) उसकी मृत्यु के बाद की रचनाएँ

प्रथम कोटि की रचनाओं में निम्नलिखित रचनाएँ शामिल हैं :–

1. सिस्टम ऑफ लॉजिक (System of Logic, 1843)
2. दि प्रिंसिपल्स ऑफ पॉलिटिकल इकोनॉमी (The Principles of Political Economy, 1848)
3. ऑन लिबर्टी (On Liberty, 1859)
4. थॉटस ऑन पार्लियामेण्टरी रिफोर्म (Thoughts on Parliamentary Reform 1859)
5. कंसीडरेशन ऑफ रिप्रेजैण्टेटिव गवर्नमेंट (Consideration on Representative Government, 1860)
6. यूटिलिटेरियनिज्म (Ulilitarianism, 1863)
7. दि सब्जेक्शन ऑफ विमैन (The Subjection of Women, 1869)

उसके जीवनकाल में ये रचनाएँ ही लिखी गई। परन्तु उसकी मृत्यु के बाद भी उसके शुभचिन्तकों ने उसकी रचनाओं को प्रकाशित करवाया। उसकी मृत्यु के बाद (1873 ई०) की रचनाएँ निम्नलिखित हैं :–

1. आटोबॉयोग्राफी (Autobiography, 1873)
2. एसेज ऑन रिलीजन (Essays on Religion, 1874)
3. लैटरस (Letters, 1910)

मिल की रचनाएँ उसकी बहुमुखी प्रतिभा को साकार करने वाले प्रतिबिम्ब है। उसकी रचनाएँ उसके व्यक्तित्व को प्रकट करने वाली तथा जीवन के सत्य पहलुओं पर प्रकाश डालने वाली जीवन गाथाएँ हैं।

4.5 अध्ययन की पद्धति (Method of Study)

जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपनी पुस्तक 'सिस्टम ऑफ लॉजिक' में समाजशास्त्रों के अध्ययन के लिए वैज्ञानिक पद्धति के बारे में चर्चा की है उसका कहना था कि समाजशास्त्र की पद्धतियों को भी प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धतियों की तरह ही कठोर बनाना चाहिए। उसने अपने अध्ययन में चार तरह की पद्धतियों का वर्णन किया है। उसकी प्रमुख पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं :–

ऐतिहासिक पद्धति (Historical Method) में किसी भी वस्तु अथवा विचार के उद्‌भव और विकास के इतिहास का अध्ययन किया जाता है। मिल का मानना है कि ऐतिहासिक पद्वति आगमनात्मक होती है। वह मानव व समाज को परिवर्तनशील मानकर उसके परिवर्तनों का इस विधि से अध्ययन करना चाहता है। उसका मानना है कि किसी विशिष्ट समय में सामाजिक परिस्थितियाँ ही समाज का स्वरूप निर्धारित करती है। परन्तु कई बार ऐतिहासिक तथ्य और घटनाएँ कलांतर में सामान्यकृत हो जाते है। इससे इस विधि की सत्यता व विश्वसनीयता कम हो जाती है।

प्रयोगात्मक पद्धति (Experimental Method) किसी विशिष्ट अनुभव पर आधारित होती है। इसको रासायनिक पद्धति भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत रसायनशास्त्री की तरह समाजशास्त्र के विद्वान् सामाजिक परिस्थितियों को मिलाकर सामान्य सिद्धान्त के निर्माण के प्रयास करते हैं। मिल की धारणा है कि सामाजिक परिस्थितियाँ सदैव बदलती रहती है। किसी एक घटना को दूसरी घटना से जोड़ना तर्कसंगत नहीं हो सकता। इसलिए यह पद्धति भी राजनीतिकशास्त्र के अध्ययन के लिए उपयोगी नहीं हो सकती।

ज्यामितीय विधि (Geometric Method) भी पूर्व कतिपय नियमों पर आधारित होती है। नियमों को परिवर्तनतशील समाज में लागू करना कठिन कार्य है। इससे समाज की वास्तविक घटनाओं की व्याख्या करना असम्भव होता है। समाजशास्त्र में पूर्व निर्धारित नियमों के अभाव में इसे लागू नहीं किया जा सकता।

निगमनात्मक पद्धति (Deductive Method) में निगमन तथा आगमन दोनों का सम्मिश्रण होता है। इसे भौतिक पद्धति भी कहा जाता है। इस पद्धति में किसी एक या कुछ मौलिक मान्यताओं से नहीं, अपितु पूर्वकथित तथ्यों से निगमन की प्रक्रिया शुरू की जाती है। प्रत्येक कार्य को कारण का परिणाम मानकर समाज की घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। इसमें तथ्यों का निरीक्षण, परीक्षण व परीक्षण से प्राप्त परिणामों का सामान्यीकरण करके सिद्धान्तों की रचना की जाती है। उन सिद्धान्तों को विशेष परिस्थितियों में दोबारा परीक्षण करके निश्चित रूप प्रदान किया जाता है।

इस प्रकार जॉन स्टुअर्ट मिल ने अध्ययन की चार पद्धतियों पर विस्तृत चर्चा करके आगमनात्मक (Inductive) तथा निगमनात्मक (Deductive) का मिश्रित रूप स्वीकार किया है। उसने कहा है कि समाजशास्त्रों में रायायनिक व ज्यामितीय विधियों का प्रयोग नहीं हो सकता। उसने अपने अध्ययन में आगमनात्मक तरीके द्वारा उपलब्ध तथ्यों की निगमनात्मक प्रयोग करके ऐतिहासिक व भौतिक पद्धतियों को मिला दिया है। उसकी अध्ययन पद्धति में तीन बातें प्रमुख हैं :–

(i) अनुभव के आधार पर ऐतिहासिक तथ्यों व घटनाओं से सामान्य सिद्धान्त की खोज करना।

(ii) अनुभव द्वारा उपलब्ध तथ्यों का निगमनात्मक प्रयोग करना।

(iii) अनुभव के द्वारा तथ्यों की सत्यता को प्रमाणित करना।

उसके द्वारा आगमनात्मक तथा निगमनात्मक पद्धति को मिलाना विरोधाभास पैदा करता है। इसलिए उसकी अध्ययन पद्धति को आलोचना का भी शिकार होना पड़ा है। लेकिन सेबाइन ने कहा है कि – "सामाजिक विज्ञानों को आगमनात्मक व निगमनात्मक दोनों पद्धतियों की जरूरत है।" इसलिए जॉन स्टुअर्ट मिल की पद्धति को समाजशास्त्री पद्धति भी कहा जाता है। यह पद्धति आगमात्मक व निगमनात्मक दोनों पद्धतियों को सामंजस्यपूर्ण प्रयोग पर आधारित है।

4.6 मिल द्वारा बेन्थम के उपयोगितावाद में किए गए संशोधन

(Mill's Modifications of Bentham's Utilitarianism)

मिल के समय में बेन्थम के उपयोगितावाद की बहुत अधिक आलोचना हो रही थी। आलोचक विद्वानों का आरोप था कि यह कोर भौरे एवं ऐन्द्रिय सुख पर आधारित है। कई लेखकों ने इसे सूअर – दर्शन (Pig Philosophy) कहकर आलोचना की है। लेकिन जॉन स्टुअर्ट मिल बेन्थम के सच्चे शिष्य होने के नाते उसकी आलोचनाओं को सहन नहीं कर सकते थे। इसलिए वे इसके बचाव में आगे आए और उपयोगितावाद के ऊपर लगाए गए आरोपों को मुक्त करने के प्रयास शुरू कर दिए। लेकिन मिल ने बेन्थम के उपयोगितावाद का अन्धाधुन्ध अनुसरण करने की बजाय उसे कुछ परिवर्तनों के साथ पेश किया। उसने बेन्थम के भौतिकवाद के स्थान पर नैतिकता, अन्तःकरण और स्वतन्त्रता पर बल दिया। परन्तु बेन्थम के

उपयोगितावाद के बचाव संशोधन में वह इतना आगे निकल गया कि वह अपने वास्तविक मार्ग से लगभग हट सा गया। इसलिए अनेक विद्वानों ने कहा है कि "जो कुछ मिल ने लिखा है, उसका बेन्थम के उपयोगितावाद से कुछ लेना – देना नहीं है। उसने स्वयं भी कहा है कि – "मैं पीटर हूँ जिसने अपना गुरू नकार दिया है।" उसके द्वारा बेन्थम के उपयोगितावाद में किए गए संशोधन निम्नलिखित हैं :–

1. **सुखमापक गणनाविधि में संशोधन :** मिल का कहना है कि इस विधि से सुख की मात्रा का आकलन निष्पक्ष रूप से नहीं किया जा सकता। सुख को वस्तुगत दृष्टि से नहीं मापा जा सकता। सुख एक आत्मपरक अनुभूति है जिसे सम्बन्धित व्यक्ति ही अनुभव कर सकता है। उसके अनुसार सुख का तात्पर्य केवल इन्द्रिय – सुख ही नहीं, बल्कि मानसिक एवं नैतिक सुख से भी होता है। इस आधार पर मिल ने सुखमापक गणना विधि को मुर्खतापूर्ण बताया है। उसका कहना है कि सुख की गणना दो सुख देने वाली वस्तुओं की प्रगाढ़ता की तुलना करके ही ज्ञात की जा सकती है। इसके लिए समुचित अनुभव का होना आवश्यक है। दोनों वस्तुओं के समुचित अनुभव के बिना सुख का पता नहीं लगाया जा सकता। इस प्रकार सुखमापक गणनाविधि (Felicific Calculus) हास्यास्पद व उपयोगितावाद के दुर्ग में एक दरार है।

2. **सुखों में गुणात्मक अन्तर :** मिल के अनुसार विभिन्न प्रकार के सुखों में अन्तर होता है। मिल ने बेन्थम के मात्रात्मक भेद का खण्डन करते हुए कहा है कि विभिन्न सुखों में गुणात्मक भेद भी होता है। उसका कहना है कि "कुछ सुख मात्रा में कम होने पर भी इसलिए प्राप्त करने योग्य होते हैं कि वे श्रेष्ठ और उत्कृष्ट कोटि के होते है।" जिन व्यक्तियों ने उच्चतर तथा निम्नतर दोनों प्रकार के सुखों का अनुभव हो, वे निम्नतर की तुलना में उच्चतर सुख को प्राथमिकता देते हैं। बेन्थम के इस कथन से कि – "यदि सुख की मात्रा समान हो तो पुश्पिन (एक खेल) भी इतना ही श्रेष्ठ है जितना काव्यपाठ" – मिल सहमत नहीं है। इस सन्दर्भ में उसका कहना है कि – "एक सन्तुष्ट सुअर और मूर्ख उससे सहमत नहीं है तो उसका कारण यह है

कि वे केवल अपने पक्ष को ही जानते है।" इस आधार पर मिल ने सुखों के गुणात्मक अन्तर को स्पष्ट किया है। उसका यह सिद्धान्त अधिक सन्तोषप्रद, सत्य और अनभवानुकूल प्रतीत होता है। इस प्रकार मिल के गुणात्मक अन्तर को स्वीकार करने का तात्पर्य यह होगा कि जीवन का लक्ष्य उपयोगिता न होकर श्रेष्ठतम सुख की प्राप्ति करना होता है।

3. **अन्य व्यक्तियों का सुख :** बेन्थम के अनुसार मनुष्य एक स्वार्थी प्राणी है जो सदैव अपने हित को ही पूरा करने में लगा रहता है। उसमें दूसरों के सुख – दुःख को समझने की योग्यता नहीं है। परन्तु मिल ने बेन्थम के इस विचार का खण्डन करते हुए कहा है कि मनुष्य केवल स्वार्थी ही नहीं, परमार्थी भी होता है। उसमें अपने सुख की इच्छा के साथ – साथ दूसरे के सुख के लिए त्याग करने की इच्छा भी विद्यमान रहती है। मिल का कहना है – "अपना सुख बिल्कुल त्यागकर दूसरों के सुख का ध्यान रखना संसार की वर्तमान अपूर्ण व्यवस्था की दशा में वह सर्वश्रेष्ठ गुण है जो मनुष्य में पाया जाता है।" मिल के अनुसार सुख की प्राप्ति का सीधा प्रयास करन व्यर्थ है। उसका मानना है कि सुख की प्राप्ति तभी सम्भव है जब इसके लिए सीधा प्रयास न किया जाए। उसके अनुसार वे व्यक्ति सुखी है जो स्वयं की तुलना में दूसरों पर अपने विचार केन्द्रित करते हैं। इस तरह मिल ने बेन्थम क उपयोगितावादी दर्शन का खण्डन किया है।

4. **इतिहास व परम्पराओं को महत्त्व :** बेन्थम ने इतिहास व परम्पराओं की घोर उपेक्षा की थी। उसने कहा था कि उसके सर्वव्यापी उपयोगिता के सिद्धान्त पर आधारित सिद्धान्त सार्वदेशिक महत्त्व के हैं। उसका कहना था कि उसके द्वारा तैयार किए गए कानून व शासन प्रणालियाँ संसार के किसी भी हिस्से में समान रूप से लागू किए जा सकते है। मिल ने बेन्थम की इस धारणा का खण्डन करते हुए कहा कि प्रत्येक देश और जाति का अपना इतिहास व परम्पराएँ अलग होती है। इतिहास व परम्परा का विकास उस देश की परिस्थितियों के अनुसार ही होता है। इसलिए प्रत्येक देश की शासन प्रणाली वहाँ परम्पराओं व इतिहास से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। बेन्थम द्वारा

इतिहास व परम्परा का तिरस्कार करना वहाँ की जन – भावनाओं का तिरस्कार करना है। ये उस शासन प्रणाली के शाश्वत मूल्य होते हैं जिनसे शासन प्रणालियाँ स्थायित्व का गुण प्राप्त करती हैं। इससे निष्कर्ष निकलता है कि अलग – अलग देशों में अलग–अलग शासन प्रणालियाँ ही पाई जाती हैं। उसका कहना था कि जिस देश में असमानता अधिक हो वहाँ लोकतन्त्र सफल नहीं हो सकता। उसने इसे भारत के लिए अनुपयुक्त शासन प्रणाली बताया है। इसलिए मिल ने इस संशोधन द्वारा इतिहास व परम्परा के महत्त्व पर प्रकाश डाला है।

5. **राजनीतिक बनाम नैतिक सिद्धान्त :** बेन्थम का विचार था कि राज्य के प्रति व्यक्तियों की निष्ठा स्वार्थपूर्ण कारणों पर आधारित है। राज्य का आदेश मानने के पीछे उनकी कोई नैतिक बाध्यता नहीं है। राज्य अपने नागरिकों का सुख बढ़ाने तथा पीड़ा कम करने के लिए ही अस्तित्व में रहता है। बेन्थम ने इस बात पर बल दिया है कि – "विधि निर्माता एवं शासक वर्ग सामाजिक नीतियों के निर्धारण तथा विधि – निर्माण में सुख के सिद्धान्त का प्रयोग करें।" इसके विपरित मिल ने बेन्थम के उपयोगितावादी सिद्धान्त में परिवर्तन करते हुए कहा – "मनुष्य के राज्य के प्रति कुछ सार्वजनिक कर्त्तव्य तथा दायित्व होते हैं जिनकी उपयोगितावादी सिद्धान्त की व्याख्या करना असम्भव है। व्यक्ति के आन्तरिक मनोवेग जिसे अन्तःकरण कहा जाता है, हमें नैतिक तौर पर राज्य के प्रति बाध्य बना देता है।" मिल ने कहा है कि अन्तःकरण अन्य लोगों के सुख में वृद्धि तथा दूसरों के दुःखों का हास चाहता है। मिल ने ईसा मसीह का उदाहरण देकर बेन्थम के उपयोगितावाद को नैतिक आधार पर प्रदान करने का प्रयास किया है। इस प्रकार बेन्थम का 'अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख का सिद्धान्त' मिल के दर्शन में नैतिक आधार में परिवर्तित हो गया है।

6. **व्यक्ति की स्वतन्त्रता को महत्त्व :** मिल ने बेन्थम के स्वतन्त्रता सिद्धान्त में भी संशोधन किया है। बेन्थम ने व्यक्ति की स्वतन्त्रता की तुलना में व्यक्ति के सुख को प्राथमिकता दी है। उसके अनुसार मनुष्य परतन्त्र होकर भी

होकर भी सुख को प्राप्त कर सकता है। परन्तु मिल ने स्वतन्त्रता की विशेष महत्त्व देते हुए इसे उपयोगिता के सिद्धान्त की अग्रगामिनी माना है। मिल के अनुसार स्वतन्त्रता का अपना विशेष महत्त्व है और यह स्वयं एक साध्य है। उपयोगिता की प्राप्ति के लिए यह साधन नहीं हो सकती। बेन्थम के विपरीत मिल ने स्वतन्त्रता के नैतिक महत्त्व को स्वीकार किया है। उसका कहना है कि इससे व्यक्ति का आत्मिक विकास होता है। मिल ने स्वतन्त्रता को व्यक्तिगत अधिकार के रूप में स्वीकार किया है। मिल के अनुसार स्वतन्त्रता उपयोगिता से बड़ी साध्य है।

7. **मनुष्य के जीवन व राज्य का लक्ष्य :** बेन्थम के अनुसार जीवन का अन्तिम लक्ष्य उपयोगिता है। उसके अनुसार मनुष्य का चरम लक्ष्य आत्मानुभूति न होकर सुख की प्राप्ति एवं दुःख का निवारण है। इसके विपरित मिल के अनुसार जीवन का लक्ष्य अपने व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बनाना है। उसका कहना है कि व्यक्ति को वही कार्य करना चाहिए जो उसके व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बनाता हो। उसने अच्छे जीवन को सुखमय जीवन से श्रेष्ठ माना है। उसके अनुसार नैतिकता सुख से महान् है। उसने बेन्थम के उपयोगितावाद दर्शन में नैतिक सिद्धान्तों का समावेश करके महान् परिवर्तन ला दिया है। उसके अनुसार राज्य का उद्देश्य सुख की वृद्धि करना न होकर व्यक्तियों के सद्‌गुणों का विकास करना है।

8. **राज्य का आधार व कार्य :** बेन्थम ने राज्य को व्यक्तिगत हित पर आधारित माना है उसका मानना है कि राज्य की उत्पत्ति व्यक्तिगत हितों को पूरा करने के लिए होती है। लेकिन मिल ने राज्य को व्यक्तिगत हित की बजाय व्यक्ति की इच्छा पर आधारित माना है। उसके अनुसार इच्छा संख्या का नहीं बल्कि गुण का प्रतीक है। जो इच्छा राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण करती है, वही आगे चलकर विश्वास का रूप लेती है। इसलिए जिस व्यक्ति का अपना विश्वास होता है, वह सामाजिक शक्ति में उन सैकड़ों व्यक्तियों के बराबर होता है, जिनकी भावना व्यक्तिगत हित से लदी होती है। मिल ने कहा है कि व्यक्ति की इच्छा और उसके व्यक्तित्व के अभाव में राज्य पूर्णता

को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए व्यक्तिगत हित की अपेक्षा व्यक्ति की इच्छा ही राज्य का आधार होती है। इसी प्रकार बेन्थम के अनुसार राज्य के कार्य निषेधात्मक हैं जबकि मिल के अनुसार राज्य व्यक्ति के विकास मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करता है तथा उसके जीवन को सुखमय बनाता है। बेन्थम का राज्य केवल अधिकतम सुख पाने में व्यक्तियों के रास्ते में आने वाली रूकावटों को ही दूर कर सकता था। लेकिन मिल ने चाहा है कि राज्य के कार्य सकारात्मक होने चाहिएं जो सार्वजनिक कल्याण के लिए जरूरी है। इस प्रकार मिल ने बेन्थम के राज्य के नकारात्मक कार्यों को सकारात्मक कार्यों में बदल दिया।

9. **आर्थिक क्षेत्र में राज्य – हस्तक्षेप का समर्थन :** बेन्थम ने व्यक्तियों को अधिकतम सुख प्राप्त करने के लिए उनको अधिक आर्थिक स्वतन्त्रता प्रदान करने का समर्थन किया है। उसका मानना है कि इससे व्यक्ति की प्रसन्नता में वृद्धि होगी और इसके परिणामस्वरूप सामाजिक प्रसन्नता में भी अनुपातिक वृद्धि होगी। इस प्रकार बेन्थम ने अहस्तक्षेप की नीति समर्थन किया है। इसके विपरीत मिल का मानना है कि इससे सार्वजनिक कल्याण का मार्ग अवरूद्ध होता है। कारखानों तथा भूसम्पत्ति पर अमीर लोगों के एकाधिकार से बहुसंख्ययों के सर्वांगीण विकास में बाधा पहुँचती है। इसलिए व्यक्ति का आर्थिक क्षेत्र में एकाधिकार शोषण की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है। इसलिए समाज में आर्थिक असमानता पाई जाती है। ऐसे समाज में राज्य का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह सार्वजनिक कल्याण के लिए आर्थिक असमानता के दोषों को दूर करने के लिए कानून बनाए। इस प्रकार मिल के आर्थिक क्षेत्र में राज्य के हस्तक्षेप का पूर्ण समर्थन किया है।

10. **समाज को महत्त्व :** बेन्थम के अनुसार समाज एक कृत्रिम संस्था है। मिल के अनुसार समाज एक स्वाभाविक संस्था है। उसका विश्वास है कि स्वस्थ सामाजिक वातावरण में ही व्यक्तियों का सार्वजनिक कल्याण सम्भव है। उसके अनुसार नैतिकता का सामाजिक उद्देश्य होता है। इसी प्रकार समाज का भी आध्यात्मिक तथ्य होता है और वह है – समाज के समस्त लोगों का

आध्यात्मिक कल्याण। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को सार्वजनिक सुख की कामना व उसकी प्राप्ति का प्रयास करना चाहिए।

11. **मतदान प्रणाली :** बेन्थम ने गुप्त मतदान प्रणाली का समर्थन किया है, जबकि मिल ने खुले मतदान का समर्थन किया है।

12. **मताधिकार :** बेन्थम ने सबको मताधिकार प्रदान करने की बात कही है। लेकिन मिल ने इसका खण्डन करते हुए शिक्षित, ज्ञानी, उत्तरदायी व बुद्धिमान लोगों को ही मताधिकार प्राप्त करने की बात कही है। उसका कहना है कि मतदान इतना विवेकशील तो अवश्य होना चाहिए जो उचित व अनुचित में स्पष्ट भेद कर सके।

13. **स्त्री–मताधिकार :** बेन्थम ने इसका कहीं उल्लेख नहीं किया है, जबकि मिल ने स्त्री – मताधिकार का जोरदार समर्थन किया है।

14. **प्रजातन्त्र पर विचार :** बेन्थम ने प्रजातन्त्र को हर परिस्थिति में उपयुक्त माना है, जबकि मिल ने इसे केवल उस समाज में ही सफल माना है, जहाँ के व्यक्तियों का चरित्र उत्कृष्ट हो। उससे भिन्न – भिन्न समाजों के लिए अलग – अलग शासन प्रणालियों का समर्थन किया है।

इस प्रकार निष्कर्ष तौर पर कहा जा सकता है कि मिल ने बेन्थम के उपयोगितावाद में महत्त्वपूर्ण संशोधन किए है। लेकिन वह उपयोगितावाद की रक्षा करते समय इतनी दूर चला गया कि इससे बेन्थम का उपयोगितावाद ही लुप्त हो गया। उसने स्वयं को उपयोगितावाद का व्याख्याता बताकर किसी नवीन सिद्धान्त का संस्थापक होने के पद से वंचित कर लिया। इसलिए सेबाइन ने कहा है कि – "मिल की सामान्य स्थिति यह है कि उसने पुराने उपयोगितावादी सिद्धान्त का एक अत्यन्त अमूर्त वर्णन किया परन्तु सिद्धान्त को ऐसे समय शुरू किया कि अन्त में पुराना सिद्धान्त तो समाप्त हो गया, किन्तु उसके स्थान पर किसी नवीन सिद्धान्त की स्थापना नहीं हुई।" इस प्रकार हम कह सकते है कि मिल द्वारा बेन्थम के उपयोगितावाद में किए गए परिवर्तनों से जो नया सिद्धान्त उभरा है, वह उपयोगितावाद के स्थान पर एक अन्तर्वर्ती (Transitional) दर्शन है। उसके प्रयासों से

इसमें उपयोगितावाद का अंश नाममात्र ही रहा गया है। इसलिए मिल को अनेक आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा है।

आलोचनाएँ (Criticisms)

बेन्थम के उपयोगितावाद में मिल द्वारा किए गए परिवर्तनों के कारण उसकी निम्न आधारों पर आलोचना हुई है :–

1. मिल ने सुख के गुणात्मक पहलू पर जोर दिया है, लेकिन वह यह भूल जाता है कि सुख को मात्रा व गुण को मापा नहीं जा सकता। इसलिए उसकी सुखमापक गणना विधि (Felicific Calculus) सही नहीं है। यह केवल एक भ्रमजाल व मिथ्या प्रयास है।
2. मिल का स्वतन्त्रता का सिद्धान्त भी दोषपूर्ण है। वह अधिकारों की कोई बात नहीं करता। इसलिए समानता और अधिकारों के अभाव में उसका स्वतन्त्रता का विचार दोषपूर्ण है। उसकी इस धारणा के कारण उसे 'खोखली स्वतन्त्रता को पैगम्बर' कहा जाता है।
3. मिल ने सीमित मताधिकार का समर्थन करके लोकतन्त्र की आधारशिला पर ही प्रहार किया है। वह प्रजातन्त्र का समर्थक होने के बावजूद भी धनी व शिक्षित लोगों के लिए ही मताधिकार की बात करता है। यह प्रजातन्त्रीय भावनाओं के खिलाफ है।
4. उसका सुखवादी दृष्टिकोण अतार्किक है। वह कहता है कि व्यक्तिगत कल्याण सार्वजनिक कल्याण में वृद्धि करता है। उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का सुख मनुष्य के अपने लिए श्रेष्ठ है, इसलिए सार्वजनिक सुख भी समाज के सभी व्यक्तियों के लिए श्रेष्ठ है। लेकिन वह यह सिद्ध नहीं कर सका कि सार्वजनिक कल्याण से व्यक्तिगत कल्याण की भी वृद्धि होती है।
5. मिल का राज्य द्वारा हस्तक्षेप का सिद्धान्त संदिग्ध व अस्पष्ट है। उसने अहस्तक्षेप के सिद्धान्त पर आधारित बेन्थम के राज्य की निन्दा तो की है परन्तु यह स्पष्ट करने में असफल रह गया है कि अहस्तक्षेप की नीति का त्याग करने पर राज्य में संघों की भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

इसलिए वह संघों के रचनात्मक महत्त्व पर कुछ भी कहने में असफल रहा है।

6. आलोचकों का कहना है कि मिल के उपयोगितावादी दर्शन में मौलिकता का गुण नहीं है। उनका कहना है कि मिल ने बेन्थम के ही सिद्धान्तों को तोड़–मरोड़कर पेश किया है। इसमें नया कुछ भी नहीं है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मिल के दर्शन में सांमजस्य तथा तार्किक संगति का पूर्ण अभाव है। इसमें मौलिकता का गुण भी नहीं है। यह सिद्धान्त विवादग्रस्त, असंगत व भ्रान्त है। इसका कोई व्यावहारिक महत्त्व नहीं है। फिर भी मिल का महत्त्व इस बात में है कि उसने बेन्थम के उपयोगितावाद को और अधिक उदार और मानवीय बनाया है। उसने बेन्थम के उपयोगितावाद की अपर्याप्तता व उसकी अपूर्णता को दूर करने का प्रयास किया है। अनेक आलोचनाओं के बावजूद हमें यह मानना ही पड़ेगा कि सभी उपयोगितावादियों में मिल का ही सिद्धान्त सबसे अधिक बोधगम्य, स्वीकार्य और सन्तोषजनक है। उसने बेन्थम के उपयोगितावाद को आधुनिक बनाने का सफल प्रयास किया है। इसलिए उनका उपयोगितावादी दर्शन राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

4.7 स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Theory of Liberty)

जॉन स्टुअर्ट मिल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचार उनके राजनीतिक चिन्तन को एक महत्त्वपूर्ण व अमूल्य देन है। मिल द्वारा लिखा गया ग्रन्थ 'आन लिबर्टी' (On Liberty) उसके स्वतन्त्रता विषयक विचारों का विस्तृत लेखा है। इस पुस्तक में उसने स्वतन्त्रता के स्वरूप एवं महत्त्व पर व्यापक रूप में चर्चा की है। उसकी इस पुस्तक की तुलना मिल्टन की 'एरोपेजिटिका' से की जाती है। इस पुस्तक में स्वतन्त्रता के मूल्यों को सर्वसमर्थित मिल की भावना के कारण उसे स्वतन्त्रता के उपासकों की श्रेणी में अभूतपूर्व स्थान प्राप्त हुआ है। इस पुस्तक में धारा–प्रवाह भाषा और तार्किक शैली का भरपूर प्रयोग हुआ है। यह पुस्तक सभी तरह के निरंकुशवाद के विरूद्ध एक मुखर आवाज है। इसलिए इस पुस्तक को एक सर्वश्रेष्ठ रचना माना जाता है और मिल को एक सर्वश्रेष्ठ राजनीतिक चिन्तक।

स्वतन्त्रता पर निबन्ध लिखने की प्रेरणा

इस रचना के प्रतिपादन के पीछे मिल के प्रमुख प्ररेणा – स्त्रोत – व्यक्तिगत अनुभव एवं समकालीन राजनीतिक वातावरण है। मिल का विश्वास था कि स्वतन्त्रता के द्वारा ही व्यक्ति के मस्तिष्क और आत्मा का विकास हो सकता है। इससे ही सामाजिक कल्याण में वृद्धि हो सकती है। सामाजिक प्रगति व्यक्ति की मौलिक रचनात्मक प्रतिभा पर निर्भर करती है। उसने देखा कि इंगलैण्ड की आर्थिक और राजनीतिक परिस्थियिाँ तेजी से बदल रही थीं। राज्य के कार्यक्षेत्र का विस्तार हो रहा था। बेन्थमवाद से उत्प्रेरित राज्य प्रजा पर अपना कानूनी शिकंजा कसता जा रहा था। व्यक्ति की स्वतन्त्रता कम हो रही थी। विधि – निर्माता संसद जीवन के किसी भी क्षेत्र में कानून बना सकता था। संसद ही सर्वोच्च थी। उसे भय था कि बहुमत का प्रतीक संसद अल्पसंख्यकों का शोषण करेंगे। उन पर जनमत का कानून थोपा जाएगा। इसलिए मिल ने बेन्थम के उपयोगितावाद के स्थान पर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उसने अपनी रचना के व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की पूरी व्याख्या प्रस्तुत की।

स्वतन्त्रता की परिभाषा (Definition of Liberty)

मिल ने अपने स्वतन्त्रता – सिद्धान्त में इसको दो प्रकार से परिभाषित किया है। प्रथम परिभाषा के अनुसार व्यक्ति अपने मन व शरीर का अकेला स्वामी है अर्थात् ' व्यक्ति की स्वयं पर प्रभुता' है। इस परिभाषा के अनुसार व्यक्ति कार्यों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए। मिल ने कहा है – "अपने आप पर, अपने कार्यों पर तथा अपने विचारों पर व्यक्ति अपना स्वयं सम्प्रभु है।" मिल का कहना है कि व्यक्ति का सर्वांगीण विकास स्वतन्त्र वातावरण में ही सम्भव है। उसके अनुसार यदि किसी व्यक्ति का कार्य दूसरों के लिए हानिकर नहीं है तो उस पर प्रतिबन्ध लगाना न्यायसंगत नहीं है। यह परिभाषा व्यक्ति के आत्मपरक कार्यों के सम्बन्ध में पूरी स्वतन्त्रता प्रदान करने के पक्ष में है। यह परिभाषा उपयोगिता के स्थान पर आत्म विकास पर जोर देती है।

दूसरी परिभाषा के अनुसार व्यक्ति उन कार्यों को नहीं कर सकता जिनसे दूसरों के हित को हानि पहुँचती हो। मिल का कहाना है कि – "व्यक्ति को उस कार्य को करने की स्वतन्त्रता है जिसको वह करना चाहता है किन्तु वह नदी में डूबने की स्वतन्त्रता नही रख सकता।" व्यक्ति केवल वही कार्य कर सकता है जिससे दूसरों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता हो। इस परिभाषा के अनुसार व्यक्ति को सकारात्मक कार्य करने के अधिकार प्राप्त हैं। यदि व्यक्ति कोई अनुचित कार्य करता है तो समाज या राज्य को उसके रोकने का अधिकार है। यह परिभाषा अन्यपरक कार्यों से सम्बन्धित है। इस प्रकार मिल का स्वतन्त्रता से तात्पर्य करने योग्य कार्यों से है तथा न करने योग्य कार्यों पर रोक से है।

स्वतन्त्रता के दार्शनिक आधार (Philosophical Basis of Liberty)

मिल ने अपने स्वतन्त्रता के सिद्धान्त का समर्थन दो प्रकार के दार्शनिक आधारों पर किया है। पहला व्यक्ति की दृष्टि से है तथा दूसरा समाज की दृष्टि से। मिल का मानना है कि व्यक्ति का उद्देश्य अपने व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास है जो कि स्वतन्त्र वातावरण में ही सम्भव हो सकता है। यदि व्यक्ति को स्वतन्त्रता प्रदान न की जाए तो उसके जीवन का मूल उद्देश्य ही नष्ट हो जाएगा। इसलिए व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए स्वतन्त्रता का होना बहुत जरूरी है। दूसरे दार्शनिक आधार के समर्थन में मिल न कहा है कि मानव समाज की प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि सभी व्यक्तियों को विकास के अवसर प्रदान किए जाएँ ताकि वे अपना सर्वांगीण विकास कर सकें। मिल का मानना हे कि समाज का विकास विशेष व्यक्तियों के कारण होता है। ये व्यक्ति कला, विज्ञान, साहित्य आदि क्षेत्रों में नवीनता लाने का सतत प्रयास करते रहते हैं। परन्तु समाज में रूढ़िवादियों की संख्या अधिक होने के कारण परिवर्तन में बाधा पहुँचती है। इससे समाज के उत्थान का मार्ग अवरूद्ध होता है। रूढ़िवादी व्यक्ति ही परम्परागत विचारों और जीवन – पद्धतियों को उत्कृष्ट व आदर्श मानते हैं, नवीन विचारों व प्रवृत्तियों का विरोध करते हैं। वे नवीन विचारधाराओं के प्रवर्तकों को सनकी समझते हैं और उनका मजाक उड़ाते हैं। लेकिन मिल का मानना है कि समाज की प्रगति इन्हीं पागल, सनकी व

दीवाने व्यक्तियों के कारण होती है। जेम्सवाट, जार्ज सटीवन्सन , कार्ल्समार्क्स, लेनिन आदि सनकी व्यक्ति ही थे जिन्होनें रूढ़िवादी विचारों का खण्डन किया। रूढ़िवादी समाज ऐसे व्यक्तियों का दमन करता है। इससे समाज के विकास का मार्ग अवरूद्ध हो जाता है। इसलिए समाज के निर्बाध विकास और उन्नति के लिए इन नवीन विचारकों को अपने विकास के समुचित अवसर दिए जाएं। इस प्रकार मिल ने व्यक्ति व समाज के विकास के लिए स्वतन्त्रता को आवश्यक माना है।

स्वतन्त्रता के प्रकार (Types of Liberty)

मिल के अनुसार स्वतन्त्रता के दो प्रकार हैं :– (i) विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता (Freedom of Thought and Expression) (ii) कार्यों की स्वतन्त्रता (Freedom of Action)

विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता (Freedom of Thought and Expression)

मिल का मानना है कि व्यक्ति को विचार व अभिव्यक्ति की पूरी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए ताकि व्यक्ति और समाज दोनों का सम्पूर्ण विकास हो सके। समाज में परिवर्तन का आधार स्वतन्त्र विचार एवं स्वतन्त्र अभिव्यक्ति ही होते है। इनके अभाव में समाज की प्रगति रूक जाती है। समाज की प्रगति के लिए सनकी व्यक्तियों की भी पूरी स्वतन्त्रता देने का पक्षधर है। लेकिन उसने मानसिक रूप से विकलांग, पिछड़ी जातियों व बच्चों को स्वतन्त्रता देने का विरोध किया है, क्योंकि इन पर दूसरों के विवेक का प्रभुत्व रहता है। उसका कहना है कि यदि स्वतन्त्र विचार उत्पन्न न हो तो समाज शीघ्र ही अपरिवर्तनशील व रूढ़िवादी हो जाता है। उसके अनुसार किसी व्यक्ति के विचारों पर प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार न तो समाज को है और न ही किसी व्यक्ति को। ऐसा प्रतिबन्ध व्यक्ति और समाज दोनों के लिए अहितकर है। मिल ने कहा है – "यदि एक व्यक्ति को छोड़कर सारी मानव जाति का मत एक हो तो भी मानव जाति को उस एक व्यक्ति को बलपूर्वक चुप करने का कोई अधिकार नहीं है। जैसे यदि उस एक व्यक्ति के पास शक्ति होती है, तो उसे मानव जाति को चुप कराने का अधिकार नहीं होता।" मिल ने अपने विचार के पक्ष में अनेक तर्क प्रस्तुत किए हैं।

विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के पक्ष में तर्क

(Arguments in favour of freedom of Thought and Expression)

1. मिल का विश्वास है कि प्रत्येक समाज की कुछ धारणाएँ व परम्पराएँ होती हैं। उनका एकमात्र आधार समाज का विश्वास होता है। व्यक्ति को ऐसे विश्वास पर आधारित परम्पराओं व धारणाओं के प्रति उन्मुक्त विचार प्रकट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यदि उसे स्वतन्त्रता से वंचित किया जाएगा तो नई विचारधारा का प्रचार नहीं होगा। ऐसा न होना समाज के लिए घातक होता है। अक्सर यह सम्भव हो सकता है कि प्राचीन विचारधारा की जगह नवीन विचारधारा सत्य हो। मिल ने कहा है कि – "यदि केवल एक व्यक्ति को छोड़कर समूची मानव–जाति एक विचार को मानने वाली हो तो भी मानव जाति के लिए यह न्यायसंगत नहीं है कि वह विरोधी मत रखने वाले व्यक्ति का दमन करे या वह एक व्यक्ति शक्ति सम्पन्न होने पर मानव – जाति के विचार का दमन करे।" मिल के इतिहास को साक्षी बनाकर सुकरात और ईसा के ऐतिहासिक दृष्टान्तों के द्वारा इस बात को सत्य सिद्ध करने का प्रयास किया है कि इन दोनों की उपेक्षा करके तत्कालीन समाज ने नवीन सत्यों का दमन किया है। मिल ने कहा है – "मानव जाति को बार – बार यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि किसी जमाने में यूनान में सुकरात नाम का एक व्यक्ति था जिसके विचारों तथा तत्कालीन समाज के प्रचलित कानूनों के मध्य एक संघर्ष हुआ था। उसके विरोधी किन्तु सत्य विचारों के बावजूद भी उसे ही मृत्युदण्ड दिया था।" इसी तरह ईसा मसीह का उदाहरण देते हुए वह कहता है – "मानव जाति को बार – बार यह याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि येरूशलम से जीसस क्राइस्ट को समाज ने सूली पर चढ़ा दिया था, क्योंकि वह समाज द्वारा मान्य विचारों के प्रतिकूल विचार व्यक्त करता था। परन्तु इतिहास साक्षी है कि उसके विचार समाज के विचारों की तुलना में अधिक अच्छे थे।" इसलिए सत्य का रूप निखारने के लिए उसका दमन करना न्यायसंगत नहीं है। यदि ईसा और सुकरात का दमन न किया जाता तो समाज को आधुनिक बनाने वाली

परिस्थितियाँ पहले ही उत्पन्न हो जाती। इसलिए यदि सामाजिक प्रगति की इच्छा रखनी है तो सत्य को पुष्ट करने के लिए विचारों एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए, उसका दमन समाज की प्रगति रोकता है।

2. **सत्य के दमन का भ्रम :** विचारों की स्वतन्त्रता न देने का एक दुष्परिणाम सत्य का दमन है। इसका अर्थ समाज की उपयोगिता का दमन करना है। जब हम कानूनी दण्डविधान द्वारा या सार्वजनिक निन्दा द्वारा किसी के विचार को दबाते है तो यह सम्भव है कि हम सत्य का दमन कर रहे हैं। मिल का कहना है कि यह विचार भ्रान्तिपूर्ण है कि जिस बात को बहुमत मानता हो वह सत्य हो। उसने गैलिलियो के विचार का उदाहरण दिया है। गैलिलियो के विचार में पृथ्वी सूर्य के चारों और घूमती है। लेकिन तत्कालीन समाज के अधिकांश व्यक्तियों के मत में सूर्य पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। इस विषय में समाज द्वारा प्रचलित नियम व मान्यताएँ असत्य हो सकते है। इन विचारों के स्थान पर सत्य को स्थापन करने वाले व्यक्तियों के विचारों के प्रयत्नों को महत्त्व न देना समाज की प्रगति को रोकता है। इसलिए इन सत्य विचारों को पूरा महत्त्व करना चाहिए।

3. **परस्पर विरोधी विचारों की अभिव्यक्ति :** सत्य को समुचित रूप में स्पष्ट करने के लिए विचार की स्वाधीनता आवश्यक है। वाद – विवाद से सत्य का स्वरूप निखरता है। यह स्वाभाविक ही है कि एक ही समय एक विषय पर अनेक मत होते हैं जो परस्पर विरोधी हो सकते हैं। हर मत के समर्थकों की दृष्टि में उनका अपना मत सम्पूर्ण सत्य और दूसरों का मत अर्द्ध सत्य या असत्य होता है। विरोधी विचारों का उत्तर देने के लिए उसे तर्क पर कसना आवश्यक हो जाता है। इससे सत्य का ज्ञान प्राप्त होता है। अन्धविश्वास समाज की प्रगति के लिए घातक होते हैं। अतः स्वतन्त्र विचार तथा तर्क द्वारा सत्य को सुदृढ़ बनाया जा सकता है। मिल का विश्वास है कि वही विचार सत्य का रूप धारण करता है जो तर्क रूपी संघर्ष में विजय प्राप्त करता है। अतः राज्य को विचार और भाषण की स्वतन्त्रता देनी चाहिए।

4. **सत्य के विभिन्न पहलू होते हैं :** मिल का मानना है कि सत्य किसी एक व्यक्ति की धरोहर नहीं है। सत्य का रूप विराट है और उसके अनेक पहलू है। सत्य की खोज में मनुष्य की स्थिति अन्धों जैसी होती है। हम सत्य के समग्र रूप का दर्शन नहीं कर सकते, किन्तु अपने अनुभव के आधार पर आंशिक रूप को ही पूर्ण समझने का आग्रह करते है। अतः सत्य के वास्तविक रूप को समझने के लिए उसे जितने अधिक दृष्टिकोणों से देखने की व्यक्तियों को स्वतन्त्रता प्रदान की जाएगी, हम उतना ही सत्य को अधिक अच्छे रूप में समझने में समर्थ होंगे। ये विभिन्न दृष्टिकोण एक – दूसरे के विरोधी न होकर पूरक ही हैं। इनको समझने के लिए व्यक्ति को विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए।

5. **विचारों की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध हानिकारक होता है :** मिल का मानना है कि सत्य की खोज एक निरन्तर प्रक्रिया है। विचारों की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध से न केवल इस खोज में विघ्न पड़ता है, अपितु इस पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे व्यक्ति का बौद्धिक, मानसिक एवं चारित्रिक विकास का मार्ग अवरूद्ध होता है। विचारों की स्वतन्त्रता से समाज की प्रगति तथा व्यक्ति के नैतिक चरित्र का विकास होता है। इसलिए विचारों की स्वतन्त्रता व्यक्ति और समाज दोनों के लिए लाभदायक है।

इस प्रकार उपर्युक्त तर्कों के आधार पर मिल ने विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर किसी भी प्रकार के प्रतिबन्ध का खण्डन किया है। उसने विचारों की स्वतन्त्रता को मानव जाति की प्रगति का आधार बताया है।

कार्यों की स्वतन्त्रता

मिल का कहना है कि विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता तभी सार्थक है जब व्यक्ति को कार्य करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाए। स्वतन्त्र कार्य के अभाव में स्वतन्त्र चिन्तन की तुलना ऐसे पक्षी से की जा सकती है जो उड़ना तो चाहता है लेकिन उसके पर कुतर दिये गये हों। मिल का मानना है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास तभी संभव है जब व्यक्ति को कार्यों की स्वतन्त्रता प्राप्त हो। कार्यों की

स्वतन्त्रता सामाजिक जीवन की प्रगति के लिये उतनी ही आवश्यक है जितने व्यक्तिगत जीवन के लिए। मिल का कहना है – "सम्पूर्ण मानव जाति के विकास के लिए जिस प्रकार विचारों की स्वतन्त्रता लाभदायक है; उसी प्रकार जब तक दूसरों को हानि नहीं पहुँचती हों तब तक विभिन्न व्यक्तियों को विभिन्न रूपों से कार्य करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए जिससे वे अपने चरित्रों का विकास विभिन्न रूपों से कर सके।"

कार्यों की स्वतन्त्रता के सन्दर्भ में मिल ने कार्यों को दो भागों में बांटा है : – (i) स्व–विषयक कार्य (Self-regarding Action) (ii) पर – विषयक कार्य (Other-regarding Action)

मिल का कहना है कि ऐसे कार्य जिनका प्रभाव करने वाले पर ही पड़ता है, दूसरों पर नहीं पड़ता, स्वविवेक के अन्तर्गत आते हैं। खाना, पीना, सोना, नहाना आदि स्व– विषयक कार्य हैं। शराब पीन व जुआ खेलना भी इसी श्रेणी में आते हैं।

ऐसे कार्य जो दूसरे व्यक्तियों पर अपना प्रभाव डालते हैं, पर – विषयक कार्यों के अन्तर्गत आते हैं। इन्हें सामाजिक कार्य भी कहा जाता है। चोरी करना, शोर मचाना, सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाना, शान्ति भंग करना आदि कार्य इस श्रेणी में आते हैं।

मिल का कहना है कि आत्म – विषयक या स्व – कार्यों के सम्बन्ध में व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। इसमें राज्य का हस्तक्षेप ठीक नहीं है। उसने कहा है कि व्यक्ति का आहार, वेशभूषा, रहन – सहन समाज में प्रचलित पद्धति से भिन्न हो तो भी उसको पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। परन्तु यदि उसके कार्यों से समाज को हानि पहुँचती हो तो उसपर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है। यदि एक व्यक्ति शराब पीकर झगड़ा करता है तो उस पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। मिल का कहना है कि "किसी व्यक्ति को अपने आपको दूसरों के लिये दुःखदायी नहीं बनाना चाहिए।" मिल ने कार्य करने के क्षेत्र में व्यक्ति को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता प्रदान करने का समर्थन किया है।

कार्यों की स्वतन्त्रता के पक्ष में तर्क

मिल ने कार्य की स्वतन्त्रता का समर्थन तीन तर्कों के आधार पर किया है :–

1. मिल ने वैयक्तिक अनुभव द्वारा चरित्र निर्माण और व्यक्तित्व के विकास की बात स्वीकार की है। उसने एक शराबी का उदाहरण देकर स्पष्ट किया है कि एक शराबी शराब पीना दो तरीकों से छोड़ सकता है। प्रथम यदि सरकार शराबबन्दी कानून बनाकर लागू कर दे। दूसरा वह स्वयं समझ जाए कि इससे उसका व उसके परिवार का अहित हो रहा है। इनमें से उसका अनुभव पर आधारित शराब छोड़ने का निर्णय ही अधिक उत्कृष्ट है। जब व्यक्ति आत्म्संघर्ष द्वारा बुराई का त्याग करता है तो उससे उसके चरित्र का निमार्ण होता है। इसलिए व्यक्ति को अन्य नागरिकों को हानि न पहुँचानें वाले कार्यों को करने की अधिक से अधिक स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
2. मिल ने मनुष्यों को सामाजिक रीति–रिवाजों और परम्पराओं से मुक्त करने का समर्थन इसलिए किया है कि वे सामाजिक विकास में बाधा डालते हैं। इसलिए व्यक्तित्व के विकास के लिए राज्य द्वारा व्यक्ति को कार्यों के पूरी स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए।
3. व्यक्तियों को पूर्ण स्वतन्त्रता देने का एक प्रबल तर्क नवीनता और आविष्कार है। मिल का कहना है कि जनता प्रायः लकीर की फकीर होती है। समाज का विकास नवीन आविष्कारों के कारण होता है। इसलिए व्यक्तियों को नवीन परिक्षण करने की पर्ण स्वतन्त्रता देनी चाहिए। समाज की उन्नति स्वतन्त्रतापूर्ण वातावरण में ही सम्भव है।

स्वतन्त्रता पर सीमाएँ **(Limitations on Freedom)**

मिल ने इस बात को स्वीकार किया है कि विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति की स्वतन्त्रता को सीमित किया जा सकता है। मिल के अनुसार ये परिस्थितियाँ निम्नलिखित हो सकती हैं :–

1. **स्वतन्त्रता का दुरूपयोग :** यदि किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता से दूसरे व्यक्ति की स्वतन्त्रता को कोई हानि पहुँचने की सम्भावना हो तो इस पर प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति चोरी करता है तो उसे इस कार्य से रोका जा सकता है, क्योंकि इसे दूसरे को हानि होती है और चोरी करने वाले का स्वयं का भी नैतिक पतन होता है। इसी तरह यदि मदिरा पीकर कोई व्यक्ति दंगा करता है तो उस पर प्रतिबन्ध लगाना उचित है। अतः राज्य को सामाजिक प्रगति की दृष्टि से अहितकर कार्यों में ही हस्तक्षेप करना चाहिए।

2. **राज्य व समाज की सुरक्षा :** जब राज्य व समाज की सुरक्षा को कोई खतरा हो तो व्यक्ति की स्वतन्त्रता का कुछ अंश प्रतिबन्धित किया जा सकता है। राज्य पर आक्रमण के समय सभी नागरिकों से अनिवार्य सैनिक सेवा की व्यवस्था की मांग की जा सकती है। यदि किसी नगर में चोरी का भय हो तो राज्य नागरिकों को पहरा देने के लिए कह सकता है, किन्तु ऐसे प्रतिबन्ध विशेष परिस्थितियों में ही लगाए जाने चाहिए।

3. **कर्त्तव्यपालन से विमुखता :** यदि कोई व्यक्ति अपने कर्त्तव्य के प्रति विमुख हो जाए तो उसकी स्वतन्त्रता पर रोक लगाई जा सकती है। यदि कोई पुलिस कर्मचारी अपनी ड्यूटी के समय पर मदिरापान करके जनता को परेशान करता है तो राज्य को इस स्व–कार्यपर पर – कार्य समझकर प्रतिबन्ध लगा सकता है, क्योंकि इससे शान्ति भंग होती है। इसलिए कोई व्यक्ति स्व–कार्य की आड़ में दूसरों के हित में बाधा नहीं पहुँचा सकता।

4. **स्व–अहित की दृष्टि से किए गए कार्यों पर :** यदि कोई व्यक्ति आत्म – हत्या का प्रयास करता है तो उसे समाज के द्वारा रोका जा सकता है, क्योंकि आत्म–हत्या करना एक पाप है। यह सामाजिक मानदण्डों के विरूद्ध है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति टुटे हुए पुल को पार करना चाहे तो राज्य उसकी सुरक्षा की दृष्टि से उसे पुल पार करने से रोक सकता

स्वतन्त्रता – सिद्धान्त के अपवाद (Exception of Theory of Freedom)

मिल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचारों के निम्न अपवाद हैं :–

1. **पिछड़ा वर्ग :** मिल का मानना है कि इस वर्ग में शिक्षा का अभाव और मानसिक अपरिपक्वता होती है। इसलिए इस वर्ग के उत्थान के लिए राज्य को कार्यशील होना चाहिए। जब तक वे अन्य वर्गों के समान न हो जाएँ उनकी स्वतन्त्रता में लगातार वृद्धि करते रहना चाहिए। जब तक वे पिछड़े रहें, उनको उक्त स्वतन्त्रताएँ प्रदान नहीं की जानी चाहिएं।
2. **नाबालिग :** मिल का कहना है कि अवयस्क व्यक्ति मानसिक तौर पर विकसित नहीं होते। उन्हें दूसरों के विवेक पर ही कार्य करने पड़ते है। दूसरों के विवेक पर आश्रित रहने के कारण वे स्वतन्त्रता का सदुपयोग नहीं कर सकते । इसलिए उन्हें स्वतन्त्रता प्रदान नहीं की जा सकती।
3. **मानसिक रूप से विकलांग :** मिल मानसिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों को भी स्वतन्त्रता देने का विरोध करता है। उसका कहना है कि इन व्यक्तियों में अच्छे – बुरे का ज्ञान नहीं होता। इसलिए ये समाज – अहित के कार्य कर सकते हैं। अतः इनको स्वतन्त्रता प्रदान नहीं करनी चाहिए।
4. **दुश्चरित्र व्यक्ति** : मिल दुश्चरित्र व्यक्तियों की स्वतन्त्रता प्रदान करने के विरूद्ध हैं। उनका मानना है कि इस तरह के व्यक्ति समाज की प्रगति में बाधक होते हैं। यदि इन्हें हर तरह की स्वतन्त्रता प्रदान की जाए तो ये समाज में विघटन को ही बढ़ावा देते हैं, विकास को नहीं।

आलोचनाएँ (Criticisms)

मिल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचार निस्सन्देह राजनीतिक दर्शन के इतिहास में महत्त्वपूर्ण होते हुए भी अनेक आलोचनाओं का शिकार हुए हैं। अनेक विद्वानों ने विभिन्न दार्शनिक एवं व्यावहारिक दृष्टिकोणों से उसकी आलोचना की है। बार्कर, लिंडसे, सेबाइन, डेविडसन आदि आलोचकों ने उसके विचारों को अमान्य व अनुपयुक्त बताया है। बार्कर ने उसे 'रिक्त स्वतन्त्रता' तथा 'अपूर्ण का मसीहा' कहा है। उसके स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचारों की आलोचना के निम्न आधार हैं :–

1. **समानता का अभाव (Absence of Equality)** : मिल ने स्वतन्त्रता पर जोर दिया है, लेकिन समानता की उपेक्षा की है। स्वतन्त्रता की सार्थकता के लिए समानता आवश्यक है। इसके अभाव में स्वतन्त्रता को स्थायित्व प्रदान नहीं किया जा सकता।
2. **सीमित दृष्टिकोण (Limited Approach) :** मिल ने पिछड़े वर्ग, बच्चों, मानसिक रूप से विकलांग व्यक्तियों की अपनी स्वतन्त्रता की परिधि से बाहर रखा है। ऐसा करने से इनका विकास का मार्ग रूक जाएगा और समाज की आमधारा से कट जाएँगे।
3. **अधिकारों का अभाव (Absence of Rights)** : मिल ने केवल स्वतन्त्रता पर तो जोर दिया है लेकिन अधिकारों की उपेक्षा की है। स्वतन्त्रता के अर्थपूर्ण प्रयोग के लिए अधिकारों का होना आवश्यक है। स्वतन्त्रता और अधिकार एक – दूसरे के पूरक हैं। एक के अभाव के दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं। बार्कर के अनुसार – "अधिकारों के बारे में मिल के पास कोई स्पष्ट दर्शन नहीं था, जिसके आधार पर स्वतन्त्रता की धारणा को कोई यथार्थ रूप प्राप्त होगा।" अधिकारों के अभाव में व्यक्ति सच्ची स्वतन्त्रता का उपभोग नहीं कर सकता।
4. **व्यक्ति अपने हितों का श्रेष्ठ निर्णायक नहीं :** मिल की यह मान्यता है कि व्यक्ति अपने हित का स्वयं निर्णायक होता है। किन्तु आधुनिक जटिल आर्थिक समाज में एक समान्य व्यक्ति अपने हितों को सही रूप में नही समझ सकता। इसके लिए उसे दूसरों की मदद की आवश्यकता पड़ती है।
5. **अवैज्ञानिकता :** मिल ने कहा है कि व्यक्ति अपने मन और शरीर का स्वामी है। इस धारणा को वैज्ञानिक आधार पर सत्य सिद्ध नहीं किया जा सकता। सत्य तो यह है कि व्यक्ति स्वार्थी और अज्ञानी है। वह अपना स्वामी न होकर अपनी प्रकृति का दास है।
6. **अल्पमत को बहुमत से अधिक महत्त्व :** मिल ने बहुमत की निरंकुशता की तुलना में अल्पमत को अधिक महत्त्व दिया है। उसने बहुमत को गलत धाराणाओं के आधार पर स्वेच्छाचारी मानने की भूल की है। बहुमत सदा आततायी नहीं होता। आधुनिक युग में बहुमत का शासन सर्वश्रेष्ठ है।

7. **कार्य – स्वतन्त्रता का भ्रामक विभाजन :** मिल द्वारा कार्य करने की स्वतन्त्रता के सन्दर्भ में व्यक्ति के कार्यों को स्व–विषयक (Self- regarding) तथा पर – विषयक (Other- regarding) में बाँटना भ्रान्तिपूर्ण और असम्भव है। व्यवहार में व्यक्ति के कार्यों में ऐसा भेद नहीं किया जा सकता। मिल के अनुसार शराब पीना स्व–विषयक कार्य हैं क्योंकि इससे पीने वाले पर ही प्रभाव पड़ता है। किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से उसका प्रभाव समाज के दूसरे व्यक्तियों पर भी पड़ता है। ऐसा कोई भी स्व–विषयक कार्य नहीं होता जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में दूसरों पर न पड़ता हो। इसलिए मिल के स्वकार्य पर पर – कार्य सम्बन्धी विचार दोषपूर्ण हैं।

8. **सनकी व्यक्तियों की स्वतन्त्रता :** मिल ने सनकी व्यक्तियों को भी पूरी स्वतन्त्रता देने का समर्थन किया है उसका मानना है कि ये व्यक्ति ही समाज की प्रगति का मार्ग खोलते हैं। इसलिए वह इन व्यक्तियों में सुकरात व ईसा मसीह का रूप देखता है। सत्य तो यह है कि सभी सनकी व्यक्ति सुकरात या ईसा मसीह नहीं हो सकते। सनकीपन चरित्र की दुर्बलता का प्रतीक होता है, न कि उत्कृष्टता का। सनकी व्यक्ति प्रायः मनोविज्ञान के प्रयोगों से विकृत मानसिकता वाले ही सिद्ध हुए हैं। इसलिए इन्हें विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करना समाज व राज्य दोनों के लिए अहितकर है।

9. **खोखली और नकारात्मक स्वतन्त्रता :** बार्कर ने मिल को 'खोखली स्वतन्त्रता का पैगम्बर' कहा है। उसके पास अधिकारों के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट दर्शन नहीं था। मिल ने 'बन्धनों के अभाव' को स्वतन्त्रता का नाम दिया है। दूसरी तरफ वह राज्य के हस्तक्षेप का भी समर्थन करता है।

10. **विरोधाभास :** मिल एक तरफ तो कहा है कि व्यक्ति अपने शरीर और विचार का एकमात्र स्वामी है और इसलिए उसे किसी भी मनचाहे कार्य को करने की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। वहीं दूसरी तरफ वह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर सामाजिक नियन्त्रण का पक्ष लेता है। इससे पहले विचार का विरोध होता है।

11. **वाद–विवाद की पवित्रता :** मिल का कहना है कि सत्य की खोज के लिए वाद–विवाद जरूरी होते हैं। लेकिन सत्य तो यह है कि वाद – विवाद में भाग

लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थवश ऐसा करता है। प्रत्येक संगठन तथा राजनीतिक दल, समाचार – पत्र, श्रमिक संगठन आदि वाद – विवाद के माध्यम से अपने हितों की रक्षा करते हैं, न कि सत्य की खोज। सत्य की खोज वाद – विवाद द्वारा नहीं, अपितु चिन्तन के द्वारा की जा सकती है। महात्मा गांधी, ईसा, सुकरात, गौतम बुद्ध आदि महापुरूषों ने चिन्तन एवं आत्मानुभति के द्वारा ही सत्य की खोज की, न कि वाद – विवाद द्वारा।

मिल के स्वतन्त्रता विषयक विचारों की चतुर्दिक आलोचना हुई। बार्कर ने उसे 'खोखली स्वतन्त्रता का मसीहा' कहा। बेवर, मैक्सी, लिंडसे आदि विद्वानों ने उसे 'निरंकुश स्वतन्त्रता का प्रतिपादक' बताया। लेकिन इससे मिल का महत्त्व कम नहीं हुआ है। आज राज्य व्यक्ति के सम्पूर्ण कार्यों का नियमन करता है। मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक राज्य का नियन्त्रण होता है। मिल की स्वतन्त्रता की पुकार मानव व्यक्तित्व की गरीमा की रक्षा के लिए एक अमोघ अस्त्र प्रतीत होती है। मिल का कथन आज भी सत्य है कि स्वतन्त्रता के वातावरण में ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास सम्भव है। मिल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचार राजनीतिक दर्शन के इतिहास में उसकी शाश्वत व अमूल्य देन हैं। मैक्सी ने कहा है कि – "मिल ने वही उत्कृष्टता प्राप्त की है, जो मिल्टन, स्पिनोजा, वाल्टेयर, रूसो, पेन, जैफरसन के विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के विचारों से प्राप्त हुई है।"

4.8 मिल के प्रतिनिधि शासन पर विचार : एक असन्तुष्ट प्रजातान्त्रिक के रूप में

(Mill's Ideas on Representative Government : As a Reluctant Domocrat)

मिल ने प्रजातान्त्रिक शासन व्यवस्था पर अपने विचार अपनी पुस्तक 'प्रतिनिधि शासन' (Representative Government) में व्यक्त किए हैं। मिल ने शासन की उस प्रणाली को ही श्रेष्ठ माना जो नागरिकों को राजनीतिक शिक्षा प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाये और जनसाधारण को अधिकारों और कर्त्तव्यों का ज्ञान कराने में सक्षम हो। उसकी दृष्टि में राज्य लक्ष्य व्यक्ति की शक्तियों का अधिकतम विकास करना है और वही शासन प्रणाली श्रेष्ठ होती है जो इनका अधिकतम विकास करे। उसके अनुसार श्रेष्ठ शासन की प्रथम विशेषता यह है कि "वह जनता

के गुणों और बुद्धि का विकास करने वाली हो। शासन की उत्तमता की प्रथम कसौटी यह जाँचना है कि वह नागरिकों में मानसिक एवं नैतिक गुणों का कहाँ तक संचार करती है, उनके चारित्रिक एवं बौद्धिक विकास के लिए कितना प्रयास करती है।" इसी प्रकार मिल ने आगे कहा है कि "आदर्श की दृष्टि से सर्वोत्तम सरकार वह है जिसमें प्रभुसत्ता समुदाय के समूचे व्यक्तियों में निहित है, प्रत्येक नागरिक को न केवल इस अन्तिम प्रभुसत्ता का प्रयोग करने का अधिकार प्राप्त है, अपितु सार्वजनिक कार्यों में व्यक्तिगत रूप से भाग लेने का अधिकार प्राप्त है।" मिल का कहना है कि जहाँ शासन की बागडोर एक ही व्यक्ति या विशेष वर्ग के लोगों के हाथ में होती है, वहाँ बहुमत के हितों की रक्षा कर पाना सम्भव नहीं है। उसके अनुसार प्रजातन्त्र ही एक ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें सभी के हित सुरक्षित करने का समान अवसर प्राप्त होते हैं। इसमें व्यक्ति अपने हितों के साथ – साथ दूसरों के हितों का भी ध्यान रखता है।

मिल ने प्रजातन्त्र को शासन सर्वश्रेष्ठ प्रणाली मानते हुए उसे अन्य शासन प्रणालियों से अलग माना है। उसके अनुसार आधुनिक युग में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की बजाय या प्रतिनिधिक लोकतन्त्र ही सर्वोत्तम शासन है। मनुष्य इस शासन को अच्छा या बुरा बना सकते हैं। उसने बेन्थम के विपरित यह कहा है कि प्रजातन्त्र सभी देशों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता। यह जहाँ भी सम्भव हो, उपयोगी व सर्वोत्तम होता है। मिल ने प्रजातन्त्र या प्रतिनिधि शासन को स्पष्ट करते हुए कहा है कि – "प्रतिनिधि शासन या सरकार का अर्थ है कि सम्पूर्ण नागरिक या उनके अधिकतर भाग समय – समय पर स्वयं द्वारा निर्वासित प्रतिनिधियों द्वारा शासन चलाते हैं और शासन की सत्ता जिसे प्रत्येक शासन में रहना अनिवार्य हैं, अपने नियन्त्रण में रखते हैं।" अर्थात् इसमें जनता द्वारा निर्वासित प्रतिनिधियों द्वारा शासन की सर्वोच्च शक्ति पर नियन्त्रण रखा जाता है। उसने कहा है कि इस शासन प्रणाली में सभी लोगों को शासन में भाग लेने का अवसर प्राप्त होता है। इससे उनके व्यक्तित्व का विकास होता है। इसलिए यह शासन – प्रणाली सबसे अच्छी होती है।

प्रजातन्त्र के पक्ष में तर्क

मिल ने प्रतिनिधि शासन का समर्थन कई आधारों पर किया है। इससे उसके प्रजातांत्रिक होने के विचार को बल मिलता है। ये तर्क निम्नलिखित हैं :

1. किसी मनुष्य के अधिकार और हित प्रजातन्त्र में ही सम्भव हैं।
2. प्रजातन्त्र के द्वारा ही लोगों का कल्याण हो सकता है। इसमें सभी की समानता स्वतन्त्रता सुरक्षित रह सकती है।
3. इसमें सभी व्यक्तियों के बौद्धिक और नैतिक विकास की सम्भावना अधिक रहती है।
4. यह प्रणाली मनुष्यों में सहयोग और आत्मनिर्भरता की प्रवृत्ति जगाती है।
5. यह लोगों में देश – प्रेम की भावना पैदा करता है। इससे राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है।
6. इसमें स्त्री– पुरूष सभी व्यस्कों को समान मताधिकार प्राप्त होता है।

मिल का मानना हे कि अन्य सभी शासन – प्रणालियाँ विशेष वर्गों के स्वार्थ – सिद्धि का साधन होती है। लोकतन्त्र ही एक ऐसी शाासन प्रणाली है जिसमें सभी वर्गों के हित सुरक्षित रहते हैं। लेकिन यह प्रणाली सभी के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती। जिन व्यक्तियों में सार्वजनिक कर्त्तव्यों का पालन करने की उपयुक्त भावना और चरित्र न हो तो उनके लिए यह व्यवस्था हितकर नहीं हो सकती। इस प्रकार मिल ने बेन्थम के लोकतन्त्र सम्बन्धी विचारों से भिन्न लोकतन्त्र को परिस्थितियों के आधार पर श्रेष्ठ माना है।

प्रजातन्त्र के प्रकार (Types of Democracy)

मिल ने अपनी पुस्तक 'प्रतिनिधि शासन' (Representative Government) में प्रजातन्त्र के दो रूपों 'नकली प्रजातन्त्र' (False Democracy) तथा 'असली प्रजातन्त्र' (True Democracy) का वर्णन किया है। उसने कहा है कि असली प्रजातन्त्र गुणों पर आधारित होता है, जबकि नकली प्रजातन्त्र संख्या पर आधारित होता है। उसने गुणों पर आधारित असली प्रजातन्त्र (True Democracy) का ही पक्ष लिया है। लेकिन दोनों

प्रजातन्त्र के रूपों को मिलाकर (संख्या तथा गुण) विशुद्ध लोकतन्त्र के निर्माण का प्रयास भी किया है।

प्रतिनिधि शासन का सिद्धान्त (Principle Representative Government)

मिल के अनुसार – "प्रतिनिधि सरकार व शासन वह व्यवस्था है, जिसमें सम्पूर्ण जन – समुदाय या उसका अधिकांश अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा अन्तिम नियन्त्रण – शक्ति का प्रयोग करता है।" उसने प्रतिनिधि शासन के लिए तीन शर्तें निर्धारित की है। जो सरकार इन तीन शर्तों को पूरा करती हो, प्रतिनिधित सरकार है।

1. वे लोग जिनके लिए ऐसी सरकार का निर्माण किया जाए, जो ऐसी सरकार को स्वीकार करने के इच्छुक हों या इतने अन्चिछुक न हों कि इसकी स्थापना में बाधाएँ पैदा करें।
2. ऐसी सरकार के स्थायित्व के लिए जो कुछ भी करना आवश्यक हो वह सब करने के लिए इच्छुक और योग्य हो।
3. ऐसी सरकार के उद्देश्य को पूरा करने के लिए ऐसे लोगों में जो कुछ सरकार चाहे वह करने के लिए तत्पर और योग्य हों। शासन की जो आवश्यक शर्तें हों वे उन्हें पूरा करने के लिए तैयार हों।

सरकार के कार्य

मिल ने प्रतिनिधि सरकार के निम्नलिखित कार्य निर्धारित किए हैं :–

1. सरकार को व्यक्तियों के विकास के लिए उपर्युक्त वातावरण का निर्माण करना चाहिए।
2. सरकार द्वारा कानूनों का निर्माण कम से कम होना चाहिए क्योंकि व्यक्तियों पर प्रतिबन्ध लगाते हैं और नागरिकों के व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप करते हैं।
3. सरकार को आपत्तिजनक कार्यों की समीक्षा करके उनके औचित्य को सिद्ध करना चाहिए।

4. उसे विश्वासघाती शासक – गणों का पदच्युत करके उनके उत्तराधिकारियों को नियुक्त करना चाहिए।
5. उसे बुरे कार्यों की निन्दा करनी चाहिए अर्थात् बचना चाहिए।
6. लोगों को राजनीतिक शिक्षा देनी चाहिए।
7. उसे जनकल्याण के कार्यों पर नियन्त्रण रखना चाहिए।

सच्चे प्रजातन्त्र के लिए सुझाव

मिल का विश्वास है कि सभी परिस्थितियों में प्रजातन्त्र सफल नहीं हो सकता। प्रजातन्त्र वहीं सफल हो सकता है, जहाँ नागरिकों में पारस्परिक सष्णिुता, राजनीतिक परिपक्वता, राष्ट्रीय एवं उत्तरदायित्व की भावना हो। लेकिन प्रजातन्त्र सर्वथा दोषमुक्त नहीं होता। इसमें बहुत निरंकुश बन सकता है। शासक जन विरोधी नीतियाँ बनाकर उन्हें जनता पर थोप सकते हैं। सामाजिक दबाव भी मानवीय गुणों को नष्ट कर सकता है। मिल प्रजातन्त्र के सभी दोषों से परिचित था। इसलिए उसने प्रतातन्त्र को सुदृढ़ बनाने के लिए कुछ दोषों को दूर करने के सुझाव दिए हैं। उसके महत्त्वपूर्ण सुझाव निम्नलिखित हैं :–

1. **बहुल मतदान (Plural Voting) :** मिल ने समानता के सिद्धान्त पर आधारित 'एक व्यक्ति एक वोट' के सिद्धान्त को एक बुराई माना है। समाज में गुणी व्यक्ति निकृष्ट व्यक्तियों से ज्यादा महत्त्व रखते हैं। अतः उन्हें अधिक वोट देने का अधिकार मिलना चाहिए। उसके अनुसार राज्य की रक्षा बुद्धि और चरित्र से ही हो सकती है। इसलिए उसने प्रजातन्त्र को सच्चे अर्थ में प्रजातन्त्र बनाने के लिए योग्य एवं शिक्षित व्यक्तियों को अशिक्षित एवं मूढ़ व्यक्तियों की तुलना में अधिक महत्त्व दिया है। उसने अल्पसंख्यकों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व के साथ – साथ बहुमत के योग्य, शिक्षित एवं पक्षपात रहित विधायकों की आवश्यकता पर भी जोर दिया है। उसने वयस्क मताधिकार का समर्थन किया है। मिल के अनुसार – "बुद्धिमान, गुणी एवं शिक्षित नागरिकों को बुद्धिहीन, गुणहीन एवं अशिक्षित नागरिकों से अधिक मत देने का अधिकार होना

चाहिए।" उसका विश्वास है कि बुद्धिमान, चरित्रवान एवं शिक्षित व्यक्तियों द्वारा ही प्रजातन्त्र की रक्षा की जा सकती है।

2. **आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Poportional Representation):** मिल ने लोकतन्त्रात्मक प्रतिनिधि शासन का सबसे बड़ा दोष बहुमत का अत्याचार और अल्पसंख्यकों की घोर उपेक्षा को माना है। इसलिए अल्पसंख्यकों को बहुमत के अत्याचार से मुक्त रखने के लिए साधारण बहुमत के स्थान पर आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त का समर्थन किया है। उसका कहना है कि साधारण बहुमत प्रणाली में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व की कभी आशा नहीं की जा सकती। उनके प्रतिनिधित्व के अभाव में उनके हित असुरक्षित रहते हैं। आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाता है। उसने इस प्रणाली की उपयोगिता पर विचार करते हुए कहा है कि – "अल्पमत भी बहुमत के समान अधिकार रखते हैं और अल्पमतों की बात देश के शासन संचालन के सम्बन्ध में नहीं सुनी जाती है तो जनतन्त्र की स्थिति को स्वस्थ या सन्तोषजनक नहीं माना जा सकता।" इसलिए जनतन्त्र के दोषों को दूर करने के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था होनी आवश्यक है।

3. **शैक्षिक योग्यता (Educational Qualifications) :** मिल ने बहुसंख्यकों के शासन को अज्ञानी व निरक्षर लोगों का शासन माना है। उसका कहना है कि देश में अधिकतर संख्या ऐसे लोगों की ही होती है। यह वोटरों की योग्यता और गुणों को बढ़ाने का प्रयास न किया जाए तो लोकतन्त्र में अल्पबद्धि और कम योग्यता वाले व्यक्ति ही हावी हो जाएंगे। लोकतन्त्र को सफल बनाने के लिए ऐसे व्यक्तियों को मताधिकार से वंचित कर देना चाहिए। उसने निरक्षर व्यक्तियों को वोट देने के अधिकार का विरोध करते हुए कहा है कि – "मैं इस बात को पूर्ण रूप से अस्वीकार करता हूँ कि जो व्यक्ति पढ़ने – लिखने में और गणित के सामान्य सवाल हल करने में समर्थ नहीं है, उसे मतदान में हिस्सा न लेने दिया जाए।" उसने विधायकों के सम्बन्ध में भी ऐसे बुद्धिमान, शिक्षित तथा प्रबुद्ध व्यक्तियों की आवश्यकता पर बल दिया है, जिन्हें विशिष्ट

ज्ञान हो, जो विधायक का अर्थ जानते हों और जिनकी राज्य निष्पक्ष तथा तर्क – सम्मत हो। इस प्रकार लोकतन्त्र को सच्चा व सुदृढ़ बनाने के लिए नागरिक व प्रतिनिधियों का शिक्षित होना जरूरी है।

4. **सम्पत्ति की योग्यता (Property Qualifications) :** मिल ने सम्पत्ति की योग्यता को भी उतना ही महत्त्व दिया है जितना शैक्षिक योग्यता को। उसका विचार है कि सम्पत्ति रखने वाले व्यक्ति के पास सम्पत्ति न रखने वाले व्यक्ति की तुलना में उत्तरदायित्व की भावना अधिक होती है। मिल ने कहा है – "यह महत्त्वपूर्ण बात है कि जो सभा कर लगाती है, वह केवल उन्हीं लोगों की होनी चाहिए जो इन करों का भार सहन करते हों। यदि कर न देने वालों को दूसरों पर कर लगाने का अधिकार दिया गया तो वे व्यक्ति आर्थिक मामलों में खूब खर्च करने वाले तथा कोई बचत न करने वाले होंगे।" इस प्रकार के लोगों के हाथ में कर लगाने की शक्ति देना स्वतन्त्रता में मौलिक सिद्धान्त को चुनौती देना होगा। इसलिए कर लगाने का अधिकार उन्हीं व्यक्तियों को मिलना चाहिए जो स्वयं कर अदा करते हों।

5. **खुला मतदान (Open Ballot) :** मिल के समय में गुप्त मतदान प्रणाली का बोलबाला था। गुप्त मतदान के समर्थकों का मत था कि इससे भ्रष्टाचार कम होता है। लेकिन मिल का मानना है कि गुप्त मतदान से व्यक्ति की स्वार्थमयी प्रवृत्तियों का विकास होता है। उसका मानना है कि मतदान का अधिकार सार्वजनिक कर्त्तव्य है। इसलिए उसने मतदान को लोकतान्त्रिक दायित्व मानते हुए खुले मतदान का समर्थन किया है। उसका कहना है कि मतदान एक पवित्र धरोहर है। इसलिए इसका प्रयोग खूब सोच – समझकर और सामान्य हित की भावना का ध्यान में रखकर ही करना चाहिए। यदि गुप्त मतदान प्रणाली के दोषों को दूर करना हो तो नागरिकों को किसी अन्य आधार पर मत का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

6. **विधि निर्माण (Law Making) :** मिल का मानना है कि विधि – निर्माण का कार्य योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों के हाथ में ही होना चाहिए। यह कार्य विधान – सभा का नहीं है। इस कार्य के लिए विधि – आयोग को करना

चाहिए और इसके सदस्य सिविल सर्विस के व्यक्ति होने चाहिएं। इन कर्मचारियों पर नियन्त्रण रखने व उन्हें पद से हटाने का अधिकार विधान – सभा के पास हो सकता है। कानूनों को पास करने का कार्य विधानसभा का हो सकता है। इस व्यवस्था द्वारा मिल ने शासन के कार्यों का संचालन योग्य व्यक्तियों द्वारा तथा कानून बनाने का अधिकार भी इन्हीं व्यक्तियों के हाथों में सौंपने का समर्थन किया है। इस प्रकार मिल ने श्रेष्ठ शासन में प्रजातन्त्र और कार्यकुशलता के बीच समन्वय स्थापित करने का समर्थन किया है। उसने लोकतन्त्र के स्वरूप को विशुद्ध बनाने का प्रयास किया है।

7. **द्वितीय सदन (Second Chamber) :** मिल ने द्वितीय सदन की स्थापना का समर्थन किया है। उसने इसकी स्थापना हित – प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर करने का प्रयास किया है। उसका मानना है कि इससे निम्न सदन की निरंकुशता पर रोक लगती है। इस सदन के सदस्य बुद्धिमान, शिक्षित, सभ्य और राजनीति में निपुण होते हैं। ये व्यक्ति निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर सार्वजनिक हित में कार्य करते हैं। ये निम्न सदन द्वारा पारित विधियों में सुधार लाते हैं। अतः यह सदन लोकतन्त्र की नींव को मजबूत आधार प्रदान करता है।

8. **वेतन और भत्ता निषेध (No Salary and no Allowance) :** मिल का मानना है कि यदि संसद सदस्यों को वेतन और भत्ते दिए गए तो लोग आर्थिक हितों को पूरा करने के लिए संसद सदस्य बनने का प्रयास करने लग जाएँगे। संसद में असक्षम व अयोग्य व्यक्तियों का प्रवेश शुरू हो जाएगा। लोगों की निष्कम सेवा की भावना संसद सदस्यों से दूर हो जाएगी। संसद महत्त्वाकांक्षी लोगों का अखाड़ा बन जाएगी। इसलिए मिल ने संसद सदस्यों के लिए वेतन व भत्तों की व्यवस्था से इंकार किया है।

9. **चुनाव पद्धति (Election Method) :** मिल का कहना है कि बौद्धिक दृष्टि से योग्य व्यक्तियों को ही चुनाव लड़ने का अधिकार मिलना चाहिए। अच्छे लेखक या सामाजिक कार्यकर्त्ता तथा किसी दल के सदस्य न होने पर भी ख्याति प्राप्त व्यक्तियों को चुनाव में चुन लिया जाना चाहिए। चुनाव पूरे राज्य में एक

साथ ही कराए जाने चाहिएं। चुनावों का खर्च उम्मीदवार पर नहीं डालना चाहिए। उसका मत है कि मतों की केवल गिनती ही नहीं, बल्कि उनका वजन भी होना चाहिए।

10. **महिला मताधिकार (Women Suffrage) :** मिल ने महिला मताधिकार का पूरा समर्थन किया है। उसका कहना है कि न्याय की माँग है कि महिलाओं और पुरूषों दोनों पर शासन केवल पुरूष द्वारा ही संचालित नहीं होना चाहिए। उसका मानना है कि यदि महिलाओं पर से पुरूषों का स्वामित्व समाप्त कर दिया जाए तो वे सामाजिक और राजनीतिक जीवन में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। इसलिए उसने कहा है – "मैं राजनीतिक अधिकारों के सम्बन्ध में लिंग – भेद को उसी प्रकार सर्वथा अनुचित मानता हूँ जिस प्रकार बालों के रंग को। यदि दोनों में कोई भेद हो भी तो महिलाओं को पुरूष की अपेक्षा अधिक अधिकारों की आवश्यकता है, क्योंकि वे शारीरिक दृष्टि से अबला है और अपनी रक्षा के लिए कानून तथा समाज पर ही आश्रित है।" इस तरह मिल ने महिला मताधिकार व महिला शिक्षा का जोरदार समर्थन करके इंग्लैण्ड में महिलाओं के सुधार की वकालत की ।

उपर्युक्त तर्कों से यह सिद्ध हो जाता है कि मिल अपने समय के असन्तुष्ट लोकतन्त्रवादी विचारक थे। उन्होनें तत्कालीन शासन – व्यवस्था में जो बुराइयाँ देखीं, उसने वे काफी असन्तुष्ट थे। उन सभी बुराइयों को दूर करने करने के लिए ही उसने अपने सुधारवादी सूझाव प्रस्तुत किए। उसने लोकतन्त्र की रक्षा के जो उपाय बताए, उनसे उसके महत्त्व में और अधिक वृद्धि हुई। उसके सुझावों को अनेक देशों में अपनाया गया। इसलिए उसके सुझाव शाश्वत मूल्यों पर आधारित माने जा सकते हैं। उसके विचारों का महत्त्व आज भी है।

आलोचनाएँ (Criticisms)

तर्कपूर्ण और बौद्धिकता के गुण पर आधारित होते हुए मिल के शासन – सम्बन्धी विचारों की व्यावहारिक आधार पर अनेक आलोचनाएँ हुई हैं। उसकी आलोचना के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं :–

1. यदि मिल के मतदाता की योग्यता का मापदण्ड लागू किया जाए तो भारत जैसे बड़े देश में कुछ ही प्रतिशत लोगों को यह अधिकार प्राप्त होगा क्योंकि यह सम्भव नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति को इतिहास, भूगोल और गणित की जानकारी हो। अतः इस सिद्धान्त को लागू करना न्यायसंगत नहीं हो सकता।
2. मिल का बहुत मतदान का सिद्धान्त भी व्यवहार में लागू नहीं हो सकता क्योंकि राजनीतिक योग्यता का कोई औचित्यपूर्ण आधार तलाशना कठिन कार्य होता है।
3. मिल ने संसद सदस्यों के लिए वेतन और भत्तों का निषेध किया है। इससे अमीर – व्यक्ति ही संसद सदस्य बनेंगे। गरीब व्यक्ति या मध्यम वर्ग के व्यक्ति प्रतिनिधि बनना नहीं चाहेंगे। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि आर्थिक कारणों से भी व्यक्ति राजनीतिक कार्यकलापों में भाग लेते हैं। मनुष्य सदैव धन सम्पत्ति में वृद्धि करना चाहता है।
4. मिल का यह विचार कि मतों की गणना के साथ – साथ उनका वजन भी किया जाए, बड़ा उचित प्रतीत होता है। परन्तु ऐसा तभी सम्भव है जब जनता का नैतिक स्तर ऊँचा हो। लोगों में स्वार्थ की भावना के रहते इसे लागू करना कठिन कार्य है।
5. मिल ने मतदाता के लिए शैक्षिक योग्यता को आवश्यक माना है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करती है। परन्तु व्यावहारिक अनुभव का भी विशेष महत्त्व है। सूरदास व कबीर के पास कोई शैक्षणिक योग्यताएँ न होने पर भी उनके ज्ञान के आगे संसार नतमस्तक होता है।
6. मिल ने आनुपातिक प्रतिनिधित्व का समर्थन किया है। इससे किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं होने के कारण स्थायी सरकार की स्थापना कर पाना असम्भव है।
7. मिल का खुले मतदान का समर्थन करना सामाजिक द्वेष को जन्म देता है। इसको अपनाने से समाज में सामाजिक सद्भाव समाप्त हो सकता है। इससे प्रजातन्त्र आंतकवादी और वर्गतन्त्रीय व्यवस्था का रूप ले सकता है।

8. मिल की आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली से प्रत्येक दल को कुछ न कुछ सीटें अवश्य प्राप्त हो जाती हैं। इससे राजनीतिक दलों में अनावश्यक वृद्धि होती है। असीमित राजनीतिक दल राजनीतिक अस्थिरता को जन्म देते हैं।
9. मिल ने संसद के कार्यों को सीमित करके उसे वाद –विवाद का केन्द्र बना देना उचित नहीं है। इससे संसद का कानून बनाने और प्रशासन करने के अधिकारों में कमी आती है।
10. मिल का यह सिद्धान्त प्रजातन्त्र की भावना के विपरीत है कि धनी व्यक्तियों को तो अनेक मत का अधिकार दे दिया जाए और अशिक्षितों को एक वोट का अधिकार भी प्राप्त न रहे। मिल ने लोकतन्त्र के आधार 'समानता के सिद्धान्त' पर ही कुठाराघात कर दिया है। अतः मिल का यह सिद्धान्त अप्रजातान्त्रिक है।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी मिल को लोकतन्त्र का सशक्त समर्थक और वफादार सेवक माना जाता है। उसने प्रतिनिधियों के व्यक्तिगत चरित्र पर बल देकर प्रजातन्त्र को जो आध्यात्मिक आधार प्रदान करने का प्रयास किया है, वह आधुनिक राजनीतिक वातावरण में मुख्य माँग है। उसने मानव – कल्याण की भावना पर आधारित लोकतन्त्र को सच्चा लोकतन्त्र माना है। उसने लोकतन्त्र को सुदृढ़ बनाने के लिए जो सुझाव दिए हैं, वे आज भी प्रासंगिक हैं। उसने प्रजातन्त्रीय और प्रशासनिक दक्षता के तत्त्वों का समन्वय करने का जो सुझाव दिया है, वह उसकी राजनीतिक दूरदर्शिता का परिचायक है। उसके द्वारा महिला मताधिकार का समर्थन भी नितान्त औचित्यापूर्ण है। उसके विचारों का महत्त्व शाश्वत है।

4.9 मिल का योगदान (Contribution of Mill)

राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में जॉन स्टुअर्ट मिल को श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है। उसने आक्सफोर्ड से पढ़कर निकलने वाले प्रत्येक बुद्धिजीवी को कुछ न कुछ अवश्य प्रभावित किया। राजनीतिक शास्त्र के जगत् में उसकी प्रशंसा के साथ–साथ कुछ आलोचना भी हुई है। मिल की आलोचना से उसका महत्त्व कम नहीं हुआ। उसकी रचना 'Political Economy' ने प्रो० मार्शल को अत्याधिक प्रभावित

किया। उसकी रचना को 'On Liberty' राजनीतिक दर्शन के इतिहास में स्वतन्त्रता का प्रथम प्रकाश स्तम्भ माना जाता है। प्रो० बाल ने कहा है कि – "मिल एक न्यायशास्त्री, अर्थशास्त्री तथा राजनीतिक दार्शनिक के रूप में अपने समय का अवतार है।"

मिल के योगदान को निम्न क्षेत्रों में देखा जा सकता है :–

1. **उदारवादी विचारक के रूप में :** मिल अपने राजनीतिक चिन्तन के कारण सबसे श्रेष्ठ और महान् उदारवादियों में गिने जाते हैं। उसके विचार में राज्य का अस्तित्व व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए है। उसकी 'विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता' सम्पूर्ण राजनीतिक चिन्तन में उसे एक श्रेष्ठ उदारवादी विचारक के रूप में प्रतिष्ठित करती है। उसे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का सबसे प्रबल समर्थक माना जाता है। उसने कहा कि हमें मनुष्य के प्रति गौरव की भावना रखना चाहिए। उसके उदाहरण के चार प्रकार से समझा जा सकता है :–

   (i) उसने उपयोगितावादी सिद्धान्त में नैतिक भावना का मिश्रण कर उसे काण्ट के समान ही मानव – व्यक्तित्व को मान्यता दी और नैतिक उत्तरदायित्व से उसका सम्बन्ध स्पष्ट किया।

   (ii) उसने सामाजिक और राजनीतिक स्वतन्त्रा को स्वयं में अच्छा बताया।

   (iii) स्वतन्त्र समाज में उदारवादी राज्य का कार्य नकारात्मक नहीं बल्कि सकारात्मक है।

   (iv) स्वतन्त्रता केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक अच्छाई भी है। विचार के दमन से समाज को भी हानि पहुँचाती है। मिल ने कहा है कि श्रेष्ठ समाज वह है जो स्वतन्त्रता की अनुमति देता है और विकास के विभिन्न अवसर प्रदान करता है।

   इस प्रकार इन चार बातों से मिल का उदारवादी विचारक होने की धारणा को बल मिलता है। मिल ने कहा है कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता का विनाश करने से

राज्य अधिक श्रेष्ठ नहीं बन सकता। राज्य का अस्तित्व तो व्यक्ति के विकास पर ही निर्भर करता है। राज्य व्यक्तियों के कल्याण का साधन मात्र है।

2. **समाज सुधारक के रूप में :** समाज सुधारक की दृष्टि से मिल का अपूर्व योगदान है। उसने महिला मुक्ति के समर्थन में जोरदार आवाज उठाई। उसने महिला मताधिकार का समर्थन किया। उसने कहा कि यदि महिलाओं पर से पुरूषों का स्वामित्व समाप्त कर दिया जाए तो उन्हें सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से उपयोगी बनाया जा सकता है। इसलिए उसने महिलाओं की समानता, शिक्षा और राजनीतिक अधिकारों का समर्थन किया।

3. **लोकतन्त्र के उपचारक के रूप में :** मिल लोकतन्त्र के अतिक्रमणों व दुरूपयोगों से भली–भाँति परिचित थे। उसने लोकतन्त्र तथा प्रतिनिधि शासन प्रणाली पर विचार करते हुए लोकतन्त्र को एक सर्वश्रेष्ठ शासन प्रणाली स्वीकार किया है। उसने लोकतन्त्र के गुणों के साथ – साथ उसक दोषों पर भी विचार करके उनको दूर करने के सुझाव प्रस्तुत किए हैं। उसने अल्पमत की बहुमत की निरंकुशता से रक्षा का उपाय सुझाया जो आज भी उचित है। उसने नागरिकों की अज्ञानता तथा उदासीनता को लोकतन्त्र की सबसे बड़ी कमजोरी बताया। उसने जनता के हित को प्रभावी बनाने के लिए प्रौढ़ मताधिकार का पक्ष लिया। उसने लोकतन्त्र के दोषों को दूर करने के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व, द्वितीय सदन, शैक्षिक योग्यता जैसे सुझाव दिए। वेपर का कथन उचित है कि – "मिल प्रजातन्त्र की बुराइयों से प्रजातन्त्र की रक्षा चाहता था।"

4. **स्वतन्त्रता का प्रबल समर्थक :** मिल ने व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का समर्थन करके स्वयं को राजनीतिक दार्शनिकों व चिन्तकों की अग्रिम पंक्ति में खड़ा कर लिया। उसके 'विचार एवं अभिव्यक्ति' की स्वतन्त्रता के बारे में विचारों ने उसको राजनीतिक दर्शन के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया है। उसकी रचना 'On Liberty' विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के समर्थन में सम्पूर्ण राजनीतिक दर्शन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। उसे इस दृष्टि से रूसो, पेन, जैफर्सन आदि की श्रेणी में रखा जाता है।

5. **पद्धतिशास्त्र की दृष्टि से :** पद्धतिशास्त्र के क्षेत्र में मिल ने गहरा चिन्तन एवं अध्ययन किया। उसने बेन्थम के अनुभववाद और अपने पिता जेम्स मिल के बुद्धिवाद के विपरीत ऐतिहासिक या प्रतिलोम निगमनात्मक पद्धति को प्रश्रय देकर पद्धतिशास्त्र के क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। उसने आगमनात्मक तथा निगमनात्मक दोनों पद्धतियाँ के समन्वय रूप को सामाजिक विज्ञानों के लिए आवश्यक माना है।

6. **उपयोगितावादी के रूप में :** मिल ने बेन्थम तथा अपने पिता जेम्स मिल के उपयोगितावादी दर्शन को नया रूप प्रदान किया है। उसने बेन्थम क उपयोगितावाद को 'सुअर दर्शन' की संज्ञा से मुक्त किया है। उसने इसे मानवीय रूप प्रदान किया है। उसने समाज – सुधार को वैधानिक प्रक्रिया माना है। मिल ही पहला उपयोगितावादी था जिसने यह स्पष्ट अनुभव किया कि समाज के बिना ने तो कोई सभ्यता हो सकती है और न ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास सम्भव है। उसका उपयोगितावाद नैतिकता और आध्यात्मिकता पर आधारित है। उसका उपयोगितावादी दर्शन पूर्ववर्ती सभी उपयोगितावादियों के दर्शन से महान् है। उसने बेन्थम के उपयोगितावाद को बुद्धिवादी दर्शन के आधार पर परिमार्जित किया है।

7. **राज्य का उद्देश्य व कार्य :** मिल ने राज्य का उद्देश्य जन – कल्याण बताकर सर्वसत्ताधिकारवादी राज्य के युग में हलचल पैदा कर दी है। मिल का जन – कल्याण का सिद्धान्त व्यक्तिवाद के लिए एक रक्षा – कवच से कम नहीं आंका जा सकता। उसने लोक – कल्याण पर जोर देकर समाजवाद का मार्ग प्रशस्त किया है। उसने राज्य के सकारात्मक कार्यों पर जोर दिया है। उसने कहा है कि सुअवसर उत्पन्न करने में तथा मानव को मानवोचित जीवन व्यतीत करने के लिए उपर्युक्त परिस्थितियाँ पैदा करने में राज्य को बहुत बड़ी सकारात्मक भूमिका निभानी पड़ती है।

4.10 निष्कर्ष (Conclusion)–

राजनीतिक दर्शन के इतिहास में जॉन स्टुअर्ट मिल का अनूठा स्थान है। वह इतिहासकार, दार्शनिक, अर्थशास्त्री, नीतिशास्त्र तथा राजनीति विज्ञान का प्रकण्ड विद्वान था। व्यक्तिगत स्वतत्रता का दार्शनिक एवं नैतिक दृष्टि से समर्थन करने वालों में मिल का नाम अग्रगण्य है। मिल ने विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के पक्ष में जो कुछ लिखा वह सम्पूर्ण राजनीतिक दर्शन के साहित्य में अद्वितीय माना जाता है। इसके अनुसार स्वतन्त्रता एक व्यक्तिगत हित नहीं है बल्कि एक सामाजिक हित भी है। स्वतन्त्र विचार विनमय के द्वारा समाज को भी लाभ पहुंचाता है। स्तन्त्रता के पुजारी के रूप में उसे रूसो, वाल्टेयर तथा जैफरसन के साथ सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। मिल ने उपयोगितावाद को भी एक नैतिक तथा आध्यात्मिक स्वरूप भी प्रदान किया है। समाज सुधारक की दृष्टि से मिल का अपूर्व योगदान हे। उसे महिला मुक्ति के समर्थन में जोरदार आवाज उठाई। आधुनिक युग का वह पहला विचारक था जिसने महिलाओं की समानता, शिक्षा तथा राजनीतिक अधिकारों का समर्थन किया। लार्ड मार्ले ने मिल के योगदान के बारे में लिखा कि लगभग बीस वर्षों तक आक्सफोर्ड से निकलने वाला प्रत्येक बुद्धिजीवी मिल के उपदेशों से किसी न किसी रूप में प्रभावित रहा। मिल के योगदान के बारे में सारांश कहा जाता हे कि यह राजनीति दर्शन में अकेला स्वतंत्रता का प्रकाश स्तम्भ है।

4.11 शब्दावली (Keywords)–

बहुमुखी – कई दृष्टिकोणों से प्रतिभाशाली

कुलीनतंत्र – उच्च कुल पर आधारित शासन तंत्र

स्व सम्बन्धी कार्य – स्वयं से सम्बन्धित कार्य

पर सम्बन्धी कार्य – ऐसे कार्य जो दूसरों से सम्बन्धित हैं।

अनभिज्ञ – अनजान

4.12 स्वमूल्याकंन (Self-Assessment)

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) जे.एस.मिल के प्रारंभिक जीवन पर किन परिस्थितियों ने प्रभाव डाला?

(2)जे.एस.मिल के स्व–सम्बन्धी कार्यों में स्वतन्त्रता की अवधारणा की व्याख्या करें।

(3)जे.एस.मिल के आर्थिक विचारों की समीक्षा करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) जे.एस.मिल द्वारा उपयोगितावाद में किए गए संशोधनों का वर्णन करें।

(2) जे.एस.मिल की प्रतिनिधि सरकार सम्बन्धी अवधारणा की व्याख्या कीजिए।

(3) स्टुअर्ट मिल का राजनीतिक चिंतन के इतिहास में क्या योगदान है? समीक्षात्मक वर्णन कीजिए।

(4) जे.एस.मिल के महिलाओं की स्वतंत्रता सम्बन्धी विचारों का विवेचन कीजिए।

(5) जे.एस.मिल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचारों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

4.13सन्दर्भ सूची–

1. प्रभुदत्त शर्मा, राजनीतिक विचारों का इतिहास (प्लेटो से मार्क्स), कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1967.
2. बी.एल.फाड़िया, पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास (प्लेटो से मार्क्स), साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2018.
3. जे.पी.सूद, पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का इतिहास (भाग–प्राचीन व मध्यकालीन), जे.नाथ एण्ड कंपनी, मेरठ, 2008.
4. सेबाइन, ए हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थ्योरी, न्यूयार्क, 1973
5. पुखराज जैन, राजनीतिक विज्ञान के सिद्धान्त, साहित्य भवन, आगरा, 1988.
6. रघुवीर सिंह, मध्यकालीन विश्व का इतिहास, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली

7. ब्रायन आर. नेल्सन, वेस्टर्न पॉलिटिकल थॉट, वेवलैंड प्रकाशन, 1996.
8. डी. बॉशर व पी. कैली, पॉलिटिकल थिंकरसः फ्रॉम सॉकरेटिज टू द प्रेजेंट, ऑक्सफोर्ड, 2009.
9. जे.कॉलमैन, ए हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थॉटः फ्रॉम एंशियट ग्रीस टू अर्ली प्रिस्टियनीटी, ऑक्सफोर्ड, 2000.
10. सी.बी.मैकफर्सन, द पॉलिटिकल थ्योरी ऑफ पसैसिव इंडिवियुलिज्मः हॉब्स टू लॉक, 1962.
11. ली. स्ट्रॉस, हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल फिलॉस्फी, शिकागो यूनिवर्सिटी प्रैस, 1987.